

पुष्प न ७, अ० भा० दि० जैन शास्त्रपरिषद् की ओर से -

नियतिवाद

अपरनाम

क्रमबद्ध पर्याय

ललक

सिद्धांतवारिधि सिद्धांतभूषण

श्री म० प० रतनचंद्र जैन मुस्तार, सद्धारनपुर
[अध्याय अ० भा० दि० जैन शास्त्रपरिषद्]

प्रकाशक

बानूलाल जैन जमादार साहित्यरत्न
संयुक्त मंत्री अ० भा० दि० जैन शास्त्रपरिषद्
१३९८, हाथीगाना, बड़ौत (मेरठ) उ० प्र

धीर निर्वाणोत्सव २४९२, सन १९६६ ई०

प्रथम आवृत्ति १००-

[मूल्य १० पैसे]

❀ विषय - सूची ❀

क्रमानु	पृष्ठ
१ नियतिवाद के स्वरूप पर विचार	१
२ 'क्रमबद्ध पर्याय' शब्द का प्रयोग क्या हुआ ?	२
३ भैया भगवतीदास की कविता पर विचार	३
४ मोक्षमार्गप्रमाण में नियतिवाद का खण्डन	४
५ प्रथम अनुयोग और क्रमबद्ध पर्याय	५
६ स्वामिनार्तिकयानुप्रेक्षा गाथा २२८ २२३ पर विचार	९
७ समयसार जात्मरर्याति और क्रमबद्ध पर्याय	१४
८ जीवा के मोक्ष जानने का काल नियत नहीं	१६
९ ससार काल अनियत है	१७
१० सर्व पदार्थ सप्रतिपक्ष हैं	२०
११ अकालमरण	२२
१२ मोक्षमार्ग और नियतिवाद	३०
१३ मर्यादता और नियतिवाद	३४

प्रस्तावना

जैन समाज के ख्यातनामा विद्वान सि० वारिधि रत्नचन्द्र भी मुम्बैनर के द्वारा लिखित 'नियतिवाद' अपर नाम 'ममम' पर्याय पुस्तक की भूमिका लिखते हुवे मुझे अत्यन्त प्रसन्नता होती है।

'नियतिवाद' के स्वष्टन में जैन शास्त्रों में पूर्वोचार्या द्वारा घट्टत कुछ लिखा गया है। भगवान महानीर कप्रित और गीतम गणधर प्रणीत द्वाग्गाङ्ग म १०वा अंग द्वाग्वाद है। यों द्वाग् का अर्थ दर्शन और वाग् का अर्थ अलोचना है। जिम अग म अनेक मिथ्या दर्शनों की अलोचना की गई है यह द्वाग्वाद अग है। यद्यपि अयान्य प्रमेयों का भी उसमें विवेचन है पर मुख्यतया इस अग का नामकरण इन मिथ्यादर्शनों के खण्डन पर ही किया गया है। इन ही मिथ्यादर्शनों को जैन शास्त्रों में पाखण्ड नाम से पुकारा गया है और उन मम का वर्गीकरण ३६३ पाखण्डों म किया गया है। 'नियतिवाद' इन्ही पाखण्डों म से एर है जिसका इस पुस्तक म निराकरण है।

नियतिवादियों का सिद्धान्त जैसा कि इस पुस्तक में बखिन है 'जो जब जहाँ जैसा होना है वह उस समय वहाँ वैसा ही होगा' इस रूप म सर्वत्र उल्लिखित है। इस मत में भविष्य में होने वाले परिधर्तन और उनके कारण जादि मभी नियत हैं। उसमें कोई हेर फेर नहीं कर सकता। इस मत के प्रतिपादक

आचार्य कीन है इसका इतिहास म कोई उल्लेख नहीं मिलता श्वेता-
म्बर प्रथों में तना अवश्य मिलता है कि भगवान महावीर की
मर्बलता को चुनोती देने के लिय गोशालक ने उनकी भविष्य
वाणियों की अनेक स्थलों पर परीक्षा की और जब ठीक निकली
तो वह नियतिवादा बन गया। लेकिन उक्त प्रमद्व जिस रूप से
वर्णित है उस पर सहसा विश्वास नहीं होता। फिर भी यह
तो सभय है कि भविष्य वाणिया की सचाई के आधार पर कोई
भी नियतिवादी बन सकता है। हो सकता है कि उस समय गोशा-
लक जैसे व्यक्ति भगवान महावीर की भविष्य वाणियों को विफल
कर उनके प्रति जनता में अविश्वास उत्पन्न करना चाहते हों
लेकिन स्वयं असफल होने पर नियतवादी बन गए हैं। जो भी
हो किन्तु यह निश्चित है कि उस समय कुछ नियतिवादी मायता
के लोग थे और वे इसका प्रचार करते थे जिसका खण्डन गौतम
गणधर को करना पड़ा।

इस मत की परम्परा आगे चली हो इसका कोई
आभास नहीं मिलता यही कारण है कि जैन नैयायिकों ने
जहाँ पददर्शना की आलोचना की है वहाँ नियतिवाद की
आलोचना का उहे कोई प्रसंग नहीं आया। जहाँ यही आलो-
चना मिलती है वहाँ जैन न्याय प्रथों में नहीं किन्तु धर्म शास्त्रों
में मिलती है वह भी मिथ्यात्व गुणस्थान के वर्णन में
अथवा दृष्टिवाद अंग का परिचय देते हुए। यदि इस मत की
परम्परा चली होती तो जैन यायप्रथा में इसका निराकरण
अवश्य होता। आचार्य प्रभाचन्द्र ने स्त्रीमुक्ति और कवल्ल
हार तन का निरसन किया है क्योंकि इस मत की परम्परा
अब तक कायम है। इसलिए लगता है कि यह मत चला तो
होगा पर गर्भपान की तरह बहुप्रचलित होने के पहले ही
विनष्ट हो गया होगा।

भगवान महावीर के समकालीन ग्योशालक के इस मत को विलीन हुए आज उतने ही वर्ष हो गये हैं जितने भगवान महावीर के निर्वाण से लेकिन स्थानकवासी साधु पद्दान्धी जो समयसार पढ़न के धार अथ दि कानजो स्वामी कहे जाने लगे हैं पुन पंद्रह वीम वर्ष से इस मत के प्रचार में संलग्न हैं । समयसार निगम्वर जैनाचार्य कृष्णशुन्द की आध्यात्मिक रचना है उमे पढ़न के बाद बेचारी आध्यात्मिकता नो निमन्त्री रड उनके बदले सुन्दर ज्ञप्या, मनोहर आसन, शुभ परिधान और उनका त्रिसध्य घत्र प्रत्यापर्वन, मंगलवर्दिना कार, पीकान्ती, सरस भोजन तथा स्वाध्यायप्रद श्रीपधोपचार का क्रम मनत धाल रहता है साथ ही आध्यात्मिक उपदेश भी रहता है । व इस सब में परिवर्तन इसलिये नहीं कर सकने कि सबह न ऐसा ही देखा था अत जो कुछ हो रहा है वह मय पहले से ही नियत था । इसके अनिश्चित समयसार में आपने निम्नरत्न और हस्तगत त्रिय है । (१) निमित्त सर्वथा जिकिचि कर है, एक व्याग से ही कार्य होता है (२) पुण्य विष्ठा है और उस करने धाल अशोध बालक की तरह पतला त्त चाटवे हैं (३) महाजन आदि सब संसार वृत्त के कारण हैं (४) घत्र पर द्रव्य होने से आत्मा क विषाम को नहीं रोक सकता (५) शरीर के श्रगोपाम का सचा लन आत्मा नहीं करती स्वय होता है (६) जीओ और जीने दो ऐमा कहन वाले आज्ञानी हैं । (७) पहले निश्चय सम्यक्त्व होता है फिर व्यवहार सम्यक्त्व होता है । व्यवहारनय है अवरय इसलिये वह मस्यार्थ है अ यदा तो असत्यार्थ ही है (८) निश्चय नय सर्वथा सत्यार्थ है (९) द्रव्य की जो पर्याय होनेवागी है वे मय पहले में ही नियत हैं और वे ही क्रम से एक के बाद दूसरी होती रहती है (१०) अकाल मरण नाम की कोई चीज नहीं है, इत्यादि ।

यद्यपि समयसार में इस प्रकार के अपसिद्धातों के निकालने का कोई आधार नहीं है पर यह सब समयसार के नाम पर ही कहा जाता है। अनेक विद्वानों ने इन सब का समप्रमाण निरसन किया है और आचार्य कुन्दकुन्द की रचनाओं से ही इन की अस्तित्व सिद्ध की है।

प्रस्तुत पुस्तक उनके नियतवाद के विरुद्ध एक सफल अभियान है और यह सिद्ध किया गया है कि नियतवाद का सिद्धांत पालण्ड (मिथ्यात्व) है। कुछ प्राकृतिक नियम हैं जो पहले से सिद्ध हैं लेकिन समाज के सभी परिघर्ष, द्रव्यों की अनन्त पर्यायों पहले से नियत है यह असंभव है।

सब कुछ नियत है इस सिद्धान्त के घोषण के लिये कहा जाता है कि सर्वज्ञ आगे होने वाली पर्यायों को पहले से ही जानना है यदि अनियत होती तो पहले से नहीं जानना।

(१) लेकिन प्रश्न यह है कि सर्वज्ञ के ज्ञान में उत्पन्न होने के प्रथम क्षण में ही समाज के सम्पूर्ण द्रव्य और आगे होनेवाली उनकी अनन्त पर्यायों सब एक साथ झलक जाती हैं। उस प्रथम क्षण में ही ऐसा कोई परिणामन अवशेष नहीं है जो सर्वज्ञ के ज्ञान में भूलने से रह गया हो ऐसी स्थिति में सर्वज्ञ के ज्ञान में एक बार ही झलकने वाली अनन्त पर्यायों सर्वज्ञ ज्ञान के अनुसार अथ परिणामनहीन है अतः वे सब निश्चय हो जायगी इसलिये सर्वज्ञ के ज्ञान के अनुसार कोई पदार्थ अनिश्चय नहीं रहेगा।

(२) एक ही पदार्थ में अनन्त विरोधी धर्म रहते हैं क्योंकि पदार्थ सत् असत् एक अनेक भेद अभेद नियत अनियत निश्चय अनिश्चय रूप है। सर्वज्ञ के ज्ञान में ये परस्पर विरोधी धर्म भूलते हैं या नहीं? अथवा इनमें से कुछ विरोधी धर्म झलकते

है बाकी नहीं अथवा नियतत्व धर्म का प्रतिपक्षी कोई अनियतत्व धर्म नहीं है।

(३) नास्तित्व धर्म के अभाव में अस्तित्व धर्म का प्रयोग नहीं हो सकता तथा क्या अनियतत्व के अभाव में नियतत्व का प्रयोग बन सकता है ?

(५) विरोधी धर्म आपेक्षित स्थिति से कहे जाते हैं यह अपेक्षा न्ययज्ञान के साथ है। सर्वज्ञ का ज्ञान प्रमाण ज्ञान है उसमें अपेक्षा के लिये कोई स्थान नहीं। उसी स्थिति में ये सर्वज्ञ किस प्रकार दो विरोधी धर्मों को जानते हैं ?

(१) सर्वज्ञ के ज्ञान में भूत और भविष्य किस रूप में हैं जब कि उनके अतीन्द्रिय ज्ञान में अतीत अनागत पर्याय वर्तमान में ही स्पष्ट हैं।

(६) 'सर्वपरार्थ नियत' है इस प्रतिज्ञा को सिद्ध करने के लिये हेतु प्रयोग कीजिये और बताइए कि यह हेतु व्याप्य, कार्य, कारण पूर्वचर, उत्तरचर, सहचर हेतुओं में से कौनसा है (यदि मात्र को न समझने वाले इसका उत्तर देने का कष्ट न कर)।

(७) आचार्य कुन्दकुन्द न लिखते हैं कि 'सर्वज्ञ व्यवहार में सब को जानता देखता है और निश्चय में अपनी आत्मा को ही जानता देखता है। इन दोनों बातों में कौनसा औपचारिक कथन है। और कौनसा वास्तविक है और यह बहने की कुन्दकुन्द को क्या आवश्यकता हुई।

(८) इत्यर्थ सूत्र में अनपवर्त्य आयुष्य और अपवर्त्य आयुष्य जीवों का कथन है उनमें कौनसा वास्तविक है।

(९) प्रश्न न ८ में जो औपचारिक कथन हो और प्रश्न न ७ में जो औपचारिक कथन हो क्या उनकी गहराई में कोई अन्तर

है। ये कुछ प्रश्न हैं जिनका समाधान नियतिवादियों को करना चाहिये। आज तब जो कुछ नियतिवाद के समर्थन में कहा गया है वह या तो सर्वज्ञ ज्ञान की दुहाई है या स्वामीकातिशयानुप्रेक्षाकी 'ज जन्म जन्मि गायी है जिनका पुष्ट प्रमाणों एवं तर्कों के साथ इस पुस्तक में खण्डन किया गया है।

कुछ दिन पहले नियतिवादी पंडिता ने शास्त्रों में वर्णित नियतिवाद पाखण्ड को कार्य कारण भाव में रहित होने के कारण पाखण्ड बतलाया था और सोनगढ़ के प्रचारित नियतिवाद को कार्य कारण भाव सहित होने से सम्यग् बतलाया था। इस स्टेट के उत्तर में लिखा था कि जिस पाखण्ड में कार्य कारण भाव को गुजायश नहीं है वह स्वभाववाद नाम का पाखण्ड है और उसका भाँजाचार्या ने खण्डन किया है। नियतिवाद पाखण्ड ने तो कार्य कारण भाव को स्वीकार किया है क्योंकि उसके वर्णन में 'जग विहाणेण' आदि पदों का प्रयोग किया है जिसका अभिप्राय कारण से ही है। तब से अब यह स्टेट छोड़ दी गई है कि नियतिवाद पाखण्ड में कार्य कारण भाव नहीं है।

इसके अतिरिक्त अब भी कुछ लोग ऐसे हैं जो यह कहते हैं कि शास्त्रों में वर्णित नियतिवाद पाखण्ड तो मिथ्यादृष्टि का नियतिवाद है और सोनगढ़ का कपोल कल्पित नियतिवाद सम्यग्दृष्टि का नियतिवाद है। इस विभाजन रेखा को पढ़कर कोई भी समझदार हमें धिना नहीं रहेगा। पहले तो इस विभाजन रेखा का कोई आधार ही नहीं है। केवल 'सुखमस्तीति वस्तुत्वम्' का ही इसमें महारा है। दूसरे नियतिवाद पाखण्ड ही क्यों? अब ३६० पाखण्डों के बारे में भी यह कहा जा सकता है कि वे सब मिथ्यादृष्टियाँ से सम्बन्ध रखते हैं और अगर सोनगढ़ के

द्वारा यन्त्रिय प्रसारित किये जाने हैं तो इनका मन्वन्ध सम्पत्तियों में हो जायगा। इस सूत्र रूप में लिये क्या कहा जाय। आज काल मात्र ऐम ही निष्प्राणतकों के आधार पर कल्पना प्रसूत सिद्धांतों का समर्थन किया जा रहा है। लेनिन व रतनचन्द जी जैसे समर्थ विद्वानों के अथक प्रयत्न से इन सबका पूर्ण खण्डन किया गया है।

इस पुस्तक में नियतिवाद के विरुद्ध युक्तिवादी तो हैं ही लेकिन प्रचुर मात्रा में आगम प्रमाणों का भी समर्थन किया गया है। पुस्तक अपने आप में स्वयं आगम बन गई है। प्र. रतनचन्द जी में यह विशेषता है कि वे युक्ति के साथ तुरन्त आगम प्रमाण उपस्थित करते हैं और उन प्रमाणों के आजू बानू जो भी शक्य समाधान होता है उसे भी अविकल दे देते हैं साथ ही अपनी सरल भाषा से उसे और भी स्पष्ट करते हैं इस पुस्तक में एक सब से सुन्दर प्रमाण जयधवल का बड़ा ही हृदयवादी है। हृदयवादी इसलिये कि वह हम नवान ही जान पड़ा। धवलाकार ने अतीत अनागत पर्यायों को अर्थ संज्ञा नहीं दी और जो अर्थ नहीं है उसे सर्वज्ञ भी व्यक्त रूप में नहीं जानता केवल शक्ति रूप में उन्हें जानता है। वर्तमान पर्याय को ही अर्थ संज्ञा है अतः वह तो सर्वज्ञ ज्ञान में व्यक्त हैं शायद पर्यायों जो पदार्थ में शक्ति रूप में है शक्ति रूप में ही सर्वज्ञ को ज्ञात है।

मुन्नाय सा ने अकाल मरण के संकल्प में भी बहुत सुन्दर स्पष्टीकरण दिया है। आचार्य विद्यानाथ का ज्ञान समाधान जिसमें अकाल मरण को सिद्ध किया गया है बड़ा ही प्रबल, शैक्षिक और अत्यन्त समाधान पूर्ण है। कुछ लोग न्याय शास्त्र में पदार्थ सिद्धि को कहते हैं कि उसका संबंध अध्यात्मा प्रथमों में वर्णित प्रमेय की ओर नहीं ले जाना चाहिए। उनके मत में मानों अध्यात्म शास्त्र

एक मन का बहलाव मात्र है और वह इतना नाजुक है कि तर्क के प्रहार को सह नहीं सकता। वे यह भूल जाते हैं कि चारों अनुयोगों में जो बंधन हो उमी को स्याद्वाद की शैली पर गिरा उतारने के लिये जैनाचार्या ने 'याय शास्त्र का प्रणयन किया है। यदि 'याय शास्त्र की सरणि से अध्यात्म बाहर हाता तो जान समयसारया तो वेदांत होता अथवा सारयशास्त्र या मात्र कपोल कल्पना बनकर रह जाता। स्वयं आचार्य बुद्धकुन्द ने अपने समयसार के प्रमेय को तर्क और स्याद्वाद की परिधि में ही समुन्नत किया है। इसीलिये तो वे होने 'सारयमत का प्रमद आ जायगा' 'विष्णुमन बधन सिद्ध हो जायगा' कांडे करे कोई भोगे इत्यादि बुद्धमत की बात मानना होगी य बधन बुद्ध बुद्ध के तार्किक दृष्टिभोग को ही सिद्ध करते हैं। अध्यात्म का श्रद्धा अपनी स्याद्वाद शैली को जीवित रखने के लिये ही उठाने एक ही प्रकरण को निश्चय नय और व्यवहारय प्रदर्शित किया है। अत अध्यात्म को 'याय की शैली में असबद्ध बतलाना लोग को आदम युग में ले जाना है जहा असबद्ध बाते भी श्रद्धा के नाम पर माय्य कर ली जाती थी।

श्री सिद्धांतपरिधि सिद्धांतभूषण प्र० रत्न चंद्जी मुस्तार ने इस पुस्तक की रचना में जो श्रम किया है उसकी सराहना की जाती चाहिए। भो य जि जैन शास्त्रपरिषद् ने इस पुस्तक का प्रकाशन कर अपने सेवा के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। मैं मुस्तार साहय और शास्त्रपरिषद् दोनों ही का अभिनन्दन करता हूँ। समाज को आशा है कि पूज्य मुस्तार सा० इसी प्रकार के रत्न समाज को अर्पित करते रहेंगे।

दिनीत,
लाल बहादुर शास्त्री M A, P H D

नियतिवाद

अपरनाम

क्रमबद्ध पर्याय

प्रश्न नं १ - 'नियतिवाद' और 'क्रमबद्ध पर्याय' इन दोनों में क्या अंतर है ?

उत्तर नं १ - 'नियतिवाद' और 'क्रमबद्ध पर्याय' इन दोनों में कोई अन्तर नहीं है। प्रत्येक द्रव्य की प्रत्येक समय की पर्याय नियत है। इस नियत पर्याय का स्थान और कारण भी नियत हैं। वह नियत पर्याय किस प्रकार की होगी यह सब सर्वथा नियत है इस में कोई हेर फेर नहीं कर सकता। क्रमबद्ध पर्याय का यही अर्थ है कि नियत पर्यायों के कालक्रम, स्थानक्रम आदि सब एक सूत्र में सर्वथा बद्ध है इस में कोई हेर फेर नहीं कर सकता। इस प्रकार 'नियतिवाद' और 'क्रमबद्ध पर्याय' में कोई अंतर नहीं है।

नियतिवाद के स्वरूप का विचार

प्रश्न नं २ - 'नियतिवाद' शब्द का प्रयोग किन किन आर्थ प्रणयों में हुआ है और 'क्रमबद्ध पर्याय' शब्द का प्रयोग किस किस आचार्य ने किया है ?

उत्तर न २ - श्री १००८ जिनेन्द्र भगवान की दिव्यध्वनि अनुसार श्री १०८ गौतम गणघर ने द्वादशमं रूप जिन श्रुत की रचना की निम्न म बारहवें दृष्टिवाद अथवा के पाँच भेदा म से 'मूत्र' म तीनभो त्रेमठ मिथ्या मतों का वर्णन है । उन ३६३ मिथ्यामतों में से 'नियतिवाद' भी एक मिथ्या मत है जिसका अर्थन 'मूत्र' के तीसरे अधिभार में है ।- उस 'नियतिवाङ्' का स्वरूप निम्न प्रकार है -

जत्तु जदा जेण जहा जस्स य गियमो हवेइत्तत्तु तदा ।
तेण तहा तस्स हवे, इत्ति वाणेणियत्ति वाणे दु॥८८२॥ (गो क)

अर्थ - जो जिस समय जहा जिनमें जैसे जिस के नियम से होता है, वह उस समय वहा उस से वैसे ही उस ने हाता ही है । ऐसा सर्वथा सध अस्तु ने मानना नियतिवाङ्क अनात मिथ्यात्व है ।

"यद्भवति तद् भवति, यथा भवति तथा भवति, येन भवति तेन भवति, यथा भवति तथा भवति, यस्य भवति तस्य भवति, इति नियतिवाङ्क ।" (पे स पृ ५५७ ज्ञानपीठ)

अर्थ - जो हीना ह वहा होता है, जैसा होना है वैसे ही होता है, जिस के द्वारा होना है उस ही के द्वारा होना है, जिस समय होना है उभी समय होता है । जिस का होना है, उस ही का होना है यह नियतिवाङ्क है जो अनात मिथ्यात्व है ।

यदा यथा यत्र यथाऽस्ति येन यत्तु, तथा तथा तत्र ततोऽस्ति तेन तत्तु । स्फुट नियत्येह नियन्धमाण, परो न शक्त निमपीह कर्तुम ॥३१२॥ (अ प म)

अर्थ - जिन का जहा जय जिस प्रकार जिस से जिन के द्वारा जो होना है तब तहा तिस का तिस प्रकार उस से उस के

द्वारा बह होना नियत है, अथ कुछ भी हेर पर नहीं कर सकता। ऐसा सर्वथा मानना एकान्त मिथ्यात्व है।

इस प्रकार श्री १०८ गौतमगणधर ने और उन के 'परचातु अन्य आचार्या ने एकांत मिथ्यात्व का कथन करते हुए 'नियतिवाद्' का उपरोक्त लक्षण बतलाया है किंतु 'क्रमबद्ध पर्याय' शब्द का प्रयोग किसी भी आचार्य ने नहीं किया है।

प्रश्न नं ३—जब 'नियतिवाद्' सिद्धांत और 'क्रमबद्ध पर्याय' सिद्धांत में कोई अन्तर नहीं है 'क्रमबद्ध पर्याय' शब्द का प्रयोग किसी आचार्य ने नहीं किया तो 'नियतिवाद्' के स्थान पर 'क्रमबद्ध पर्याय' शब्द का प्रयोग क्या किया जाता है ?

उत्तर नं ३—'नियतिवाद्' सिद्धांत को श्री १०८ गौतम गणधर ने एकांत मिथ्यात्व कहा है ऐसा आर्षे प्रथो म स्पष्ट उल्लेख है। यदि 'नियतिवाद्' सिद्धांत का 'नियतिवाद्' के नाम से ही प्रचार किया जाता तो भोला समाज इसको स्वीकार न करती। 'नियतिवाद्' के स्थान पर 'क्रमबद्ध पर्याय' नामान्तर उमलिय किया गया है कि भोली जनता में उस 'नियतिवाद्' एकांत मिथ्यात्व का 'क्रमबद्ध पर्याय' के नाम से प्रचार हो सके।

प्रश्न नं ४—'जो जा देगी वीतरागी न, सो सो हो सी धीरा रे।' इन वाक्यों के द्वारा तो नियतिवाद् (क्रमबद्ध पर्याय) का उपदेश किया गया है फिर नियतिवाद् को एकान्त मिथ्यात्व क्यों कहा जाता है।

उत्तर नं ४—इन वाक्यों से भी एकांत नियतिवाद् का उपदेश नहीं दिया गया है। इस पूर्ण पद्य पर यदि विचार किया जाय तो बात स्पष्ट हो जाती है।

जो-जो देगी वीतरागी ने, सो सो हो सी धीरा रे।

अन होनी सुबत, काहे होत अधीरा रे ॥ १

इसमें स्पष्ट हो जाता है कि इस म तो षष्ठ के समय अधीर न होने के लिये इस प्रकार का विचार करने के लिये उपदेश दिया गया है। इसीलिये इसी पत्र के अंत में निम्न प्रकार लिखा गया है।

निश्चय ध्यान धरहु वा प्रभु को, जो तारे भव पीरा रे।

भैया चेत धरम निज अपनो, जो तारे भव पीरा रे ॥

उम पत्र के द्वारा यह उपदेश दिया गया है कि चेतना रूपी धर्म को सभाल कर श्री जिनेन्द्र भगवान का ध्यान कर जिससे भव भ्रमण रूपी दुःख मिटकर समार समुद्र से पार हो जायगा। मोक्ष जान का काल नियत नहीं है जिसकी तुझ का इन्तजार करनी पड़े किन्तु मोक्ष तेरे पुण्यार्थ पर निर्भर है। जब तू अपनी चेतना को सभाल कर प्रभु का ध्यान कर लेगा तू समार समुद्र से पार हो जायेगा।

पूर्ण प्रकरण को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि 'जो जो देखी धीतराग ने' इत्यादि छंद के द्वारा एतन्त नियतियाँ का उपदेश नहीं दिया गया किन्तु मोक्ष पुण्यार्थ के उपदेश द्वारा मोक्ष पर्याय का काल अनियत सिद्ध किया गया है।

प्रश्न न ५—मोक्षमार्ग प्रकाशक में तो काललब्धि व भवितव्यता को मोक्ष का कारण कहा है। जिससे सिद्ध है कि प्रत्येक पर्याय अपने नियत स्वकाल पर ही होगी जाग पीछे नहीं हो सकती ?

उत्तर न ५—मोक्ष मार्ग प्रकाशक का यदि पूर्ण प्रकरण देखा जाय तो मोक्ष पर्याय के लिये काललब्धि व भवितव्यता का निषेध ही है। उम म तो निम्न प्रकार लिखा है।

पूयोक्त तीन कारण कहे तिन त्रिये काल लब्धि वा होनहार तो किछु वस्तु नाही। जिस काल विपैकार्य बने सोइ काललब्धि

'और जो कार्य मया सोइ होनहार । बहुहि जो धर्म का उपरामा
 कि है मो पुद्गल की शक्ति है । तारा आत्मा हर्ता करता
 नहीं । बहुहि पुरुषार्थ ते उद्यम करिण है मो यह आत्मा का कार्य
 है । ताने आत्मा को पुरुषार्थ करि उद्यम करने का उपदेश
 कीजिय है ।'

इस से स्पष्ट हो जाता है कि माभ्रमार्ग प्रकाशक में भी काल
 लक्ष्य, होनहार या नियत स्वकाल स्वीकार नहीं किया गया
 है किन्तु मोक्षपथाय के काठ को अनियत मानकर पुरुषार्थ के
 द्वारा मोक्ष पर्याय की प्राप्ति का उपदेश किया गया है । जब
 मोक्ष पर्याय का काल नियत नहीं है तो आग पीछे होने का प्रश्न
 ही उत्पन्न नहीं होता । 'काल लक्ष्य य 'होनहार' न द्रव्य है,
 न गुण है, न पर्याय है और न आपत्ति धर्म है इमीलिय
 माभ्रमार्ग प्रकाशक में कहा गया 'काललक्ष्य या होनहार तो किछु
 वस्तु नाही'

प्रयामानुयोग और त्रमबद्ध पर्याय

प्रश्न न ६—पंचमखालके अठ म होने थाने मुनि, आर्यिका,
 श्रावक, श्राविका के नाम आदि का कथन पाया जाता है और
 आगामी श्रौथीम ताधैरु व नाम भी पाये जाते हैं । तथा
 मारीच का जीव अन्तिम तीर्थकर होगा । इत्यादि कथन प्रथमा
 नुयोग म पाये जाते हैं । जिनमे त्रमबद्ध पर्याय सिद्ध होती है

उत्तर न ६—यदि कुछ पर्यायों का काल नियत हो तो
 तबत यह सिद्ध नहीं हो सकता कि सब द्रव्या की मर्ष पर्यायों
 का काल नियत है । क्योंकि नियत पर्यायों की अन्य पर्यायों के
 साथ व्याप्तिज्ञान का संबंध नहीं है । जैसे धूम के सद्भाव म

अग्नि का मद्भाग अवश्य जाता है और जिन के अभाव में धूम का भी अभाव होता है, तथा नियत पर्यायों और अन्य पर्यायों में सम्बन्ध नहीं है। किन्तु जैसे परमेश्वर की वंश पुत्र उत्पन्न हुए व उहाँ वाले वंश उन उद्गुप्त पुत्रों को काला देगकर यह पढ़ता कि सातवा पुत्र जो गर्भ में है यह भी माला होगा यह ठीक नहीं है क्योंकि उन उद्गुप्त पुत्रों का गर्भस्थ सातवें पुत्र के गर्भ में अविनाभाव सम्बन्ध नहीं है। इसलिए यह तर्कामात्र है। उसी प्रकार किसी द्रव्य की दो चार अशुद्ध पर्यायों में काल की नियति को देखकर जब अशुद्ध पर्यायों को भी नियति कहना तबामात्र है अर्थात् ठीक नहीं है।

जिस द्रव्य का जो पर्याय नियत होती है वही का कथन करना सम्भव है किन्तु जो पर्याय अनियत हैं उन का कथन सम्भव नहीं है। जैसे जितम इक्षीमर्षे कलकी राजा का और उस के समय में दानवाने मुनि, आशिका भावक, आशिका का तो उल्लेख है किन्तु उस में पूर्व में हाववाने कलकी राजा तथा उनके समय में होनेवाले मुनि जार्यका, भावक, आशिका के नाम आदि का भी उल्लेख नहीं है, इस का कारण यह है कि उनकी पर्याय अनियत हैं। इस दुन्हा-अवमर्षिणी काल के पश्चात् जो प्रथम हुआ अवमर्षिणी काल हागा उसमें प्रथम तीर्थकर कौन होगा यह अनियत है अन्यथा तबका कथन होता।

यदि कोई भा हुनुमान जी का उदाहरण लेकर अपने बच्चे को पर्वत पर गिरा देवे तो उस को अपने बच्चे से हाथ घोना पड़ेगा, उसी प्रकार यदि कोई कुछ नियत पर्यायों का उदाहरण लेकर मोक्षपर्याय के लिये उस नियत समय की इंतजार करने लग तो तबका अकरुण ही होगा।

प्रथमानुयोग म म्मे मा अनर्को उन्नाहरण हैं जिनसे यह सिद्ध होता है कि पर्याय अनियत भी हैं। जैसे [१] खन्रीमार भील काग का माम खापगा या नहा और यह मरकर का उस्पन्न हागा यह मय अनियत था, क्योंकि अयधि ज्ञान के द्वारा भी यह नियत रूप में नहीं जाना जा सका। [२] श्री धर्म रचि मुनिराज मरकर मानवे नरक जायेगे या नहीं यह अनियत था, क्योंकि चार ज्ञान के धारी भी गौतम गणधर ने निम्न प्रकार उत्तर दिया था

अत परं मुहूर्तं चनेवमेव स्थिति मजेत् ।
आयुषो नारकस्यापि प्रायोग्योऽय भविष्यति

यदि अत्र अन्तर्मुहूर्त तक उन की ऐसी ही स्थिति रही तो वे नरक आयु का बाध करने योग्य हो जायेगे।

अहा पर पर्याय अनियत होती है वही पर 'यदि' आदि शब्दों का प्रयोग होता है। इन प्रकार प्रथमानुयोग का आधार पर भी यह सिद्ध होता है कि कुछ पर्याय नियत हैं और कुछ पर्याय अनियत हैं।

श्री १०८ कुल भट्ट जाचाय ने सार समुचय ग्रन्थ में कहा है—

आयुर्धस्यापि देवज्ञैः परिज्ञाते दिता तके ।
तस्यापि क्षीयते सद्यो निमित्तातरयोगत ॥६॥

१ उपलम्भानुपलम्भनिमित्त व्याप्तिज्ञानमूह इदमस्मि सत्येव भवत्यसति न भवत्येवेति च ॥ यदाग्नायेव धूमस्तद्भागे न भवत्येवेति च ॥ असम्बद्धत ज्ञान तर्काभास यावांस्तत्पुत्र स श्याम इति यथा ॥ [परीक्षामुर] ।

नियतियाँ

अर्थ जिस किसी की भी आयु, भाग्य के ज्ञाता ज्ञानि-
द्वारा हित से [अमुक समय में] जान होगी ऐसा जान लिए
जाये उसकी भी आयु किसी विपरीत निमित्त का संयोग हो
पर शीघ्र क्षय हो जाता है। [श्री म शीतलप्रसाद वृत्त अर्थ]।



स्वामिकार्तिकेष्वनुप्रेक्षा गाथा ३२१, ३२२ व ३२३ पर विचार

प्रश्न नं ७—भी स्वामी कार्तिकेय अनुप्रेक्षा म तो ३२१, व ३२२ गाथाओं द्वारा नियतिवाद सिद्धान्त को सिद्ध किया है और गाथा ३२३ म यह भी कहा है कि जो एकान्त नियतिवादी को नहीं मानता वह मिथ्यादर्ष्ट है फिर सर्वज्ञ नियतिवादी के मानने वाले को मिथ्यादर्ष्ट क्या कहत हो ?

उत्तर नं ७—स्वामिकार्तिकेष्वनुप्रेक्षा ३२३ व ३२२ में पञ्चात नियतिवादी का उपदेश नहीं दिया गया है किन्तु कुदेव की पूजा के निषेध के लिये सम्यग्दर्ष्ट क्या विचार करता है उन विचारों का कथन है और गाथा ३२२ म तो यह कहा गया है कि जो जिनागम अनुसार उहाँ दृश्य और उनकी पर्यायों का भ्रद्धान करता है वह सम्यग्दर्ष्ट है और जिनागम अनुसार भ्रद्धान नहीं करता वह मिथ्यादर्ष्ट है । स्वामिकार्तिकेष्व अनुप्रेक्षा म उस स्थल पर पञ्चात नियतिवाद सिद्धान्त का कथन करने का कोई प्रकरण ही नहीं था। इसका स्पष्टीकरण निम्न प्रकार है—

गाथा ३२१, ३२२ व ३२३ धर्मानुप्रेक्षा म है । धर्मानुप्रेक्षा गाथा ३२४ म मुनि धर्म और गृहस्थ धर्म का भेद सही प्रकार का धर्म बनलाया है । गाथा ३२५ व ३२६ म गृहस्थ धर्म का बारह भेदों का कथन है । जिसम सर्वप्रथम भेद 'सम्यग्दर्शन' का है । गाथा ३२७ से ३३४ तक 'सम्यग्दर्शन' की उत्पत्ति आदि का कथन

है और गाथा ३०५, ३२६ व ३२७ में सम्यग्दर्शन के महात्म्य का कथन है उसके पश्चात् ग्यारह प्रतिमा के स्वरूप का कथन है।

गाथा ३०७ में सम्यग्दर्शन की उत्पत्ति की योग्यता का कथन है। गाथा ३०८ से ३११ तक सम्मत्त्व के उपशमादि तीन भेदों का कथन है। गाथा ३११ व ३१२ में सम्यग्दृष्टि का लक्षण बतलाते हुए यह कहा है कि जो अनेकान्तात्मक तत्वों का तथा जीवाजीवादि पदार्थों का श्रुत ज्ञान और नयों के द्वारा श्रद्धान् करता है वह सम्यग्दृष्टि है। गाथा ३१३ व ३१४ में यह बतलाया कि सम्यग्दृष्टि के आठ मन् नहीं होते और विषयों को हेय समझता है। गाथा ३१२ व ३१६ में बतलाया कि सम्यग्दृष्टि की माधु के प्रति विनय होती है और साधर्मियों में अनुराग होता है तथा शरीर और जीव को भिन्न जानता है। गाथा ३१६ में यह कहा है जो दोष रहित देव को, दयामयी धर्म को और निर्णय गुरु को मानता है वह वास्तव में सम्यग्दृष्टि है। गाथा न १८ में यह कहा कि जो दो दोष सहित देव को जीव हिंसा में धर्म और परिग्रह सहित गुरु को मानता है वह निश्चय से मिथ्यादृष्टि है अतः कुदेव की पूजा के निषेध के लिये सम्यग्दृष्टि क्या विचार करता है उन विचारों का कथन गाथा ३१६ से ३२२ तक इन चार गाथाओं में किया गया है। इन चार गाथाओं में किसी सिद्धांत का कथन नहीं है।

ये गाथा इम प्रकार हैं—

जय को वि देदि सच्चिद गु को वि जीवस्य गुणानि उचयार ।

उचयारं अचयारं परमं वि महासुहं सुगदि ॥ ३१९ ॥

भसाए पुत्रजमागो विमरदेषो वि देदि जदि लख्डी ।

तो वि धम्मो कीरणि एव चित्तेइ सहिट्ठो ॥ ३२० ॥

ज जम्म जम्मि देम जग विहाणेण जम्मि कालम्मि ।

णाद जिणेण जियदं जम्मं वा अहव मरणं वा ॥ ३२१ ॥

सं तस्म तम्मि देसे तेण विहाणेण तम्मि कालम्मि ।

पो मक्कणि चारदु इणे वा तद् जिणिंदो वा ॥ ३२२ ॥

अर्थान — गाथा ३२० म 'एवं चित्तेइ सहिट्ठी' मन्मगट्टि
इम प्रकार विचार करता है, य शब्द 'मध्यम हीनक न्याय से
गाथा ३१८ व ३२१ व ३२२ स भी सम्बंध रखते हैं ।
मन्मगट्टि विचार करता है कि न तो कोई जीव को लक्ष्मी
देता है और न कोई उपकार करता है । उपकार या अपकार तो
जीव वा शुभ या अशुभ कर्म करता है । नोट यह मात्र
मन्मगट्टि के विचार हैं, सिद्धान्त नहीं हैं, क्योंकि भी १०८
उपनिषद्गीता ने सत्वार्थ सूत्र में "परस्परोपमहो जीवानाम्
[६।-१॥]" और भी १०८ अमृतचन्द्र मूरि ने सत्वार्थसार मं
'परस्परस्य जीवानामुपकारो निगमते ।" इन शब्दों द्वारा यह
सिद्धान्त स्पष्ट रूप से कहा है कि एक जीव दूसरे जीव का
उपकार या अपकार कर सकता है । कमठ के जीव ने भी १००८
पार्षनाथ के जीव का अनेकों भवों म अपकार किया है । इस
प्रकार गाथा ३१९ म किसी सिद्धान्त का पथन नहीं है ।

गाथा ३२० — मन्मगट्टि ऐसे विचार है जो व्यक्तर देव ही
मक्ति करि पूज्या हुवा लक्ष्मी दे है । तो धर्म को काहे कीजिये ॥
सुदेव की पूजा के निषेध के लिये यद्यपि यह विचार करे है कि

व्यतर देव लक्ष्मी आदि नहीं दे सकता तथापि सठ मुदर्शन, सुलोचना, अजना आदि का कष्ट व्यतर देवों ने दूर किया पर गुफा में श्री हनुमान का जन्म हुआ था उस समय व्यतर ने ही मिह से अजना की रक्षा की थी। श्री १०८ शुद्धि जाचार्य को श्री १००८ सीमधर तीर्थंकर के समवर्णन में देव ही ले गये थे।

इस गाथा ३२० में यह भा कहा गया है कि धर्म पुण्यार्थ के द्वारा लक्ष्मी की प्राप्ति हो सकती है लक्ष्मी आदि का कोई नियत काल नहीं है। जिस समय जीव वर्म पुण्यार्थ करेगा उस के द्वारा उस को लक्ष्मी प्राप्त हो जायगी। लक्ष्मी जान का कोई काल व्यवस्थित नहीं है।

गाथा ३२१ व ३२२ में शुद्धि पूजा के लिये सम्यग्दृष्टि विचार कर है कि व्यतर आदि देवों का तो बात ही क्या इन्द्र व जिने द्र जने भी किसी जीव के जन्म मरण या सुख दुख को टालना में समर्थ नहीं है क्योंकि जिस जीव के जिम क्षेत्र में जिस काल में जन्म विधान करि जन्म मरण या सुख दुख सर्वांश देव न जाण्ये है सो ही तिस प्राणी के तिस ही क्षेत्र में तिस ही काल में तिस ही विधान करि नियम स होय है।

इन दो गाथाओं में श्री १८ स्वासी कार्तिकेय ने एतत् नियतिवाद का मिथ्यात्व नहीं कहा था क्योंकि श्री स्वामी कार्तिकेय यह जानते थे कि सब देव न (जिनका जहाँ जब जिम प्रकार जिसस जिसस द्वारा जो होना है, तब नही तिस का तिस प्रकार उससे उसके द्वारा वह अवश्य होता है। पर महानाचार्य सबज्ञाना के विरुद्ध कैसे उपदेश दे सकते थे।
 श्री गाथा, ३२१ व ३२२ स्वामिकार्तिकेयानुप्रेक्षा से एतन्त

नियतिवाद सिद्धांत को सिद्ध करना चाहते हैं व श्री १८ न्यायिकातिक्रम्य महानाचार्य पर जिन-द्रोही का न्येप आरोपित करना चाहते हैं ।

गाथा ३१६, ३२०, ३२० व ३२२ म गाथा ३२३ का सम्बन्ध नहीं है क्योंकि गाथा ३१६, ३२०, ३२१ व ३२२ म सम्यग्दृष्टि के विचारों का कथन है और गाथा ३२३ म सम्यग्दृष्टि के लक्षण का कथन है जो निम्नप्रकार है—

गाथा ३२३—श्री पर जयचन्द्र जान गाथा ३२३ स्वामिकातिक्रम्य अनुप्रेक्षा का निम्न प्रकार भाषा अनुपात किया है ।
 “या प्रकार निश्चय है सब द्रव्य जीव पुद्गल धर्म अवर्म जाका काल इनिक चहुरि इन द्रव्यनि की सब पर्यायनि सर्वज्ञ के आगम के अनुसार जाण है अध्यान कर है सो शुद्ध सम्यग्दृष्टि है, चहुरि ऐसे अध्यान न करे शका सदह करै है सो सर्वज्ञ के आगम के प्रतिफल है प्रगत, पर्ये मिथ्यादृष्टि है । -

इस गाथा में स्पष्ट हो जाता है कि जो सर्वज्ञ के आगम के प्रतिफल एकान्त नियतिवाद (क्रमबद्ध पर्याय) मिथ्यात का अध्यान करे वह प्रगतपर्ये मिथ्यादृष्टि है । जो जानियौतवाद (वैम जबद्ध पर्याय) म शक्या सदेह कर है वह भी मिथ्यादृष्टि है, क्योंकि सर्वज्ञ आगम में नियति अनियति, काल अकाल, स्वभाव अस्वभाव का कथन पाया जाता है ।

गाथा ३२३ का सम्बन्ध गाथा ३२४ में है क्योंकि गाथा ३२४ में कहा है ‘कि जो जीव अपने ज्ञानावरण के विशिष्ट अयोपक्षम, विना तथा विशिष्ट गुरु के सयोग विना, तत्पार्वक नहीं जान मर है सो जीव, जिन वचन विपै ऐसे अध्यान कर है जो जिनेश्वर देवने जो तत्प कहा है, सो सर्व-हा, में भले

प्रकाश इष्ट करूँ ऐसे भी अध्यानवान होय है। जो जिनेश्वर वचन की श्रद्धा करे है, जो सर्वज्ञ देव ने कछा है सो सर्व मेरे इष्ट है, ऐसे मामा-य श्रद्धावै भी आशा सम्यक्त्व कहा है।”

समयसार आत्मख्याति और क्रमबद्ध पर्याय

प्रश्न न ८—समयसार सर्वविशुद्ध अधिकार गाथा १ से ४ तक को आत्मख्याति टीका म श्री अमृतचन्द्र आचार्य ने 'जीवो हि तावत्क्रमनियमितारमपरिणामैरूप्यमानो जीव एव नाजीव शब्दों द्वारा क्रमनियमित अर्थात् क्रमबद्ध पर्याय का उपदेश दिया है फिर उसका निषेध क्यों किया जाता है ?

उत्तर—भी १०८ अमृतचन्द्र के 'जीवो हितावत्क्रमनियमितात्मपरिणामैरूप्यमानो जीव एव नाजीव । इस वाक्य का अर्थ श्री पंडितवर जयचन्जी छावडा ने इस प्रकार किया है—“जीव है सो तौ प्रथम ही क्रमकरि जर नियमित निश्चित अपने परिणाम तिनिहरि उपजता सता जीव ही है, अजीव नहीं है।” इसका यह अभिप्राय है कि प्रत्येक जीव द्रव्य के परिणाम (पर्याय) क्रम क्रम से होय हैं युगपत् नहीं होय हैं। वे पर्याय नियमित हैं निश्चित हैं अर्थात् जीव द्रव्य की पर्याय जीव (चेतन) रूप ही होंगी अजीव (अचेतन) रूप नहीं होंगी यह निश्चित है। अपने परिणाम (पर्याय) करि उपजे हैं अर्थात् प्रत्येक जीव द्रव्य की अपनी अपनी पर्याय भिन्न भिन्न हैं, इसलिय प्रत्येक जीव द्रव्य का अपनी अपनी पर्याय की अपेक्षा उत्पाद होता है दूसरे जीव द्रव्य की पर्याय की अपेक्षा उत्पाद नहीं होता है, क्योंकि प्रत्येक द्रव्य अपनी पर्याय से तन्मय होता है। इसी टीका म कहा भी है—“सर्वत्र याणा स्वपरिणामै सह तादात्म्यात् कषणादिपरिणामै काचनवत् ।” अर्थात् सबे ही द्रव्यनिकै

अपने परिणामनिर्जर सहित तादात्म्य है, कोई भी अपने परिणामनिर्जे अय नाही, ऐसे अपने परिणाम तिनिक् छोडि अय म जाय नाही, जैसे कर्णादि परिणामनिर्जे सुवर्ण अपने हैं, सो कर्णादिक तें अय नाही है तिनिर्जे तादात्म्यस्वरूप है, जैसे सर्व द्रव्य हैं ।

यन्नि यहां कोई ऐसी आशना कर कि 'अपने परिणाम' इतने शब्द ही उपर्युक्त अर्थ के लिये पर्याप्त थे, अमयद्व-पर्याय को मत छाने के लिये 'नियमित' शब्द दिया गया है । ऐसी आशना करना ठीक नहीं है, क्योंकि 'अपने परिणाम' कहने से इतना जाना जाता है कि प्रत्येक द्रव्य की पर्यायें भिन्न भिन्न हैं किंतु इससे यह सिद्ध नहीं होता कि जीव की पर्याय चेतन रूप होगी अचेतन रूप नहीं और अजीव द्रव्य की पर्यायें अचेतन रूप होंगी चेतन रूप नहीं होंगी । 'नियमित' अर्थात् 'निदिचत' शब्द से यह स्पष्ट कर लिया गया कि जीव द्रव्य की पर्यायें चेतन रूप होंगी अचेतन रूप नहीं और अजीव द्रव्य की पर्यायें अचेतन रूप होंगी चेतन रूप नहीं होंगी । यदि 'नियमित' शब्द न दिया जाता तो चारवाक्यमन का निवारण न होता । चारवाक्यमन यत्मानता है कि अचेतन वाच भूतों (द्रव्या) के मिलने से चेतन पर्याय उत्पन्न होजाती है, इसका निवारण करने के लिये श्री १०८ अमृतचन्द्र आचार्य ने नियमित शब्द का प्रयोग किया है । यहांपर 'नियति' या अनियति का प्रकरण ही नहीं था किंतु यहांपर समयमात्र सर्वविशुद्धि अधिकार म गाथा १४ में तो यह प्रकरण है कि जीव पलट कर अजीव नहीं होजाता और अजीव पलट कर जीव नहीं होता किंतु 'जीव' जीव ही रहता है और 'अजीव' अजीव ही रहता है ।

'नियमित' शब्द 'क्रम' का विशेषण नहीं है इसलिये भी 'क्रम नियमित आत्मपरिणाम' का अर्थ "क्रमबद्ध पर्याय" नहीं हो सकता है।

सब जीवों के मोक्ष जाने का काल नियत नहीं है।

प्रश्न न ८ सब जीवों के मोक्ष जाने का काल तो नियत है?

उत्तर सब जीवों के मोक्ष जाने का काल नियत नहीं है। श्री सत्त्वाथे राजयात्रिण प्रथम अध्याय सूत्र ९ की टीका में निम्न प्रकार कथन श्री १८ जम्बून देव ने किया है—

शिष्य कहता है कि यदि अवधृत मोक्ष काल से पूर्व अधिगम सम्यक्त्व के बल से मोक्ष हो जाय तो अधिगम सम्यग्दर्शन सफल है किन्तु ऐसा होता नहीं क्योंकि अपने नियत काल पर ही मोक्ष होता है अतः बिना उपदेश के (निमज्ज सम्यक्त्व) से ही सिद्ध होते हैं उपदेश निरर्थक हैं। उसने उत्तर में श्री १०८ अम्बु देव सर्वज्ञ घाणी अनुमार कहते हैं—

“कालानि यथाय निजराया ।” अर्थात् कमनिजरा के लिये कोई काल का नियम नहीं है क्योंकि भव्य जीवों के समस्त कम निजरा पूरक मोक्ष जाने के काल का नियम नहीं है। कितने भय संख्यात काठ मरितन असंख्यात काठ म और कितने अनंत काठ म मोक्ष जाते हैं। और कुछ अनंतानंत काल म भी मोक्ष नहीं जाते। इसलिये यह कहना ठीक नहीं है कि भव्य जावने मोक्ष प्राप्ति का काल नियत है अर्थात् भव्य जीव अपने नियत काल पर ही मोक्ष प्राप्त करता है। यदि सर्व जीवों के मोक्ष जाने का काल नियत मान लिया

जाय तो वाय और अभ्यान्तर कारणों (जो कि प्रत्यक्ष व परोक्ष ज्ञान के विषय हैं) से विरोध आता है । भी १०८ अजल्फ देव की सस्कृत टीका इस प्रकार है—

“यतो न भव्याना कृत्नर्मनिर्जरापूर्वमोक्षमालस्य नियमोऽस्ति कचिद् भव्या सत्येयेन कालेन सेत्स्यति, के चिदसत्येयेन केचिन्नतेन, अपरे अनतानतेनापि न सेत्स्यतीति । ततश्च न युक्तरम् ‘भव्यस्य कालेन नि भयेमोपपत्तेऽस्ति । यदि हि सर्वस्य कालो हेतुरिष्ट स्यात्, याथाभ्यन्तरका एनियमस्य दृष्टस्यष्टम्य वा विरोध स्यात् ।”

इन आर्ष वाक्यों में स्पष्ट है कि सब जीवों के मोक्ष जाने का काल नियत नहीं है । यदि ऐसा न माना जाय तो मोक्ष मार्ग का उपदेग निरर्थक हो जायगा ।

ससार की अनित्यता

प्रश्न नं ९—मद्य ससारी जीवों का ससार काल नियत है, वे उस ससारकाल को काट कर हीन नहीं कर सकते, इसलिये उन मद्य के मोक्ष पर्याय उत्पन्न होने का काल भी नियत है ।

उत्तर—सब मसारी जीवों का ससार काल का प्रमाण नियत नहीं है । भी १०८ वीरसेन स्वामी ने कहा है—

“एकमे जणादिय मिच्छदिट्ठी तिष्णिं वरणाणि करिय सम्मतं पडियण्णो तेण सम्मत्तेण चप्पज्जमाणेण अणतो संमारो छिण्णो सतो अट्ठपोगालपरियट्टमेत्तो वदो ।”

[धवल पु ४ पृ ४७९]

अर्थ—एक अनादि मिथ्यादृष्टि कोई जीव तीनों करणों [अध करण, अपूर्वकरण, अनिश्चिकरण] को करके सम्यक्त्व

नियतिवाद

को प्राप्त हुआ। उत्पन्न होने के साथ ही उस सम्यग्त्व में जन्म ससार को छिन्न करके अर्द्धपुद्गल परिवर्तन मात्र काल दे दिया गया।

“एकवेण जगत्थि मिच्छान्तिट्टणा तिप्पिण परणाणि कादु उवमममम्मत्त पडिवण्ण पटमसमण जणतो ममारो ट्ठि जद्धपोग्गलपरियट्टमेत्तो कणे।”

[धवल पु ५, प ११, १२, १३, १४, १६, १७,]

अर्थ—एक जनादि मिथ्याच्छि जीव न जन्म प्रवृत्तांतीना करण करके उपनाम सम्यग्त्व को प्राप्त होने के पथम समय में अनन्त ससार को छिन्न कर अर्द्धपुद्गल परिवर्तन मात्र किया।

जिस भव्य जीव की ससार रूप पर्यायों का काल अनन्तानन्त रूप था, उसने सम्यग्दर्शन के द्वारा अर्द्धपुद्गल परिवर्तन काल से उपरितन पर्यायों को छेद कर दिया और मोक्ष पर्याय जो अनन्तानन्त काल पश्चात् पडी हुई था उसको निकट करदी।

यदि मोक्ष पर्याय का काल नियत होता तो ससार काल का छेद नहीं हो सकता था। क्या कि मोक्ष पर्याय से पूर्व मय ससार पर्याय का काल है। ससार पर्याय के काल के छेद होता है अत मय जोयों के मोक्षपर्याय का काल नियत नहीं है।

श्री १०८ बुद्ध बुद्ध, आचार्य ने भी कहा है—

“एकक पडिदमरण छिदि जाहीसयाणि बहुमाणि”

[मूलाचार ३११]

अर्थात्—एक पडित मरण सेरहों जन्मो (संसार भवा) को छेदे है।

ससार पूर्वक मोक्ष होता है। जब ससार काल कम हो सकता है अर्थात् ससारकाल नियति (अवस्थित) नहीं है तो मोक्ष जाने का काल कैसे नियत हो सकता है।

जो, श्री १०८ अकलकदेय के यज्ञों पर भ्रष्टा न कर, अत्यन्त भीरु के मोक्ष प्राप्ति का काल नियत है आगे वीर्य नदी का सञ्चना, वसा मानते हैं उनका मत म संसार काल भी नहीं छिद सकता है। क्योंकि मोक्ष प्राप्ति के नियत काल के पश्चात् मरना मरना पर्याय है नहीं, जो पचाय है ही नदी डमका छे तो डमका नहीं जा सकता। मोक्ष प्राप्ति के नियत काल से पूर्व की समार पर्याय भी छिद नहीं सकती, क्योंकि उनके छिदने से मोक्ष प्राप्ति का काल नियत नहीं रहता, किन्तु संसार पर्यायों का छेद होता है। अतः मोक्ष प्राप्ति का काल नियत नहीं है, इस प्रकार सर्वज्ञ योगी अनुमार भक्तों के मोक्ष जान का काल नियत नहीं है। श्री १०८ तु द-तु व आचार्य, अकलकदेय और परमेन-स्वामी न इस बात का स्पष्ट रूप में कहा है।



सर्वे पदार्थे सप्रतिपक्षे ह्ये ।

प्रश्न न १० - 'अनियत पर्याय' किस प्रकार सिद्ध होती ?

उत्तर - "मव्य मपड्विवक्ता" अर्थात् सर्व प्रतिपक्ष महित इम सिद्धान्त के अनुसार नियत पर्याय का प्रतिपक्ष अनियत पर्याय अर्थात् है । यदि सद्भाव स्वीकार न किया जाय अनियत पर्याय के अभाव म उम के प्रतिपक्ष रूप नियत पर्याय के अभाव का प्रसंग आ जायगा । जिस प्रकार ससार पर्याय अभाव म उम के प्रतिपक्ष भूत मुक्त पर्याय के अभाव का प्रसंग आता है । कदा भी है—

“तदभावे अभव्यजीवाणु पि अभावावत्तीदो । ण च तं ससारिणमभावावत्तीदो । ण चेदं पि, तदभावे अससारीण अमावण्य संगदो । ससारीणमभावे सते कथ अससारीणमभावावत्तीदो, त जहा—ससारीणमभावे सते अससारीणो णत्थि, सप्पड्विवक्खम्स उवलमण्णहाणुवत्तीदो
[धवल पु १४ पृ २३३ २३४]

अर्थ - भव्य जीवों का अभाव होने पर अभव्य जीवों का भी अभाव प्राप्त होता है । भव्य और अभव्य जीवों का अभाव नहीं है, क्योंकि भव्य और अभव्य जीवों का अभाव होने पर ससारी जीवों का अभाव प्राप्त होता है । ससारी जीवों का अभाव नहीं है, क्योंकि ससारी जीवों का अभाव होने

असंसारी जीवों (मुक्त जीवों) के भी अभाव का प्रसंग आता है। यदि ऐसी शंका हो कि असंसारी जीवों का अभाव होने पर असंसारी (मुक्त) जीवों का अभाव कैसे गमन है ? तो आचार्य इस का उत्तर देते हुए कहते हैं कि असंसारी जीवों का अभाव होने पर असंसारी (मुक्त, सिद्ध) जीव भी नहीं हो सकते, क्योंकि सब सप्रतिपक्ष पदार्थों की उपलब्धि अयोग्या नहीं बन सकती।

“अदि मुहमणामधम्मं न होज्ज, तं मुहमजीवाणमभापो होज्ज । न च ण्य, सत्पडिक्खण्णाभावे चादराण पि अभावप्पसगादो ।” [धवल पु ६ पृ ६०]

अर्थ - यदि मूहम नाम कर्म न हो तो उस के उदय में होने वाले मूहम पर्याय वाले जीवों का भी अभाव हो जायगा। किन्तु ऐसा है नहीं, क्योंकि अपने प्रतिपक्ष के अभाव में चादरकायिक पर्यायवाले जीवों के भी अभाव का प्रसंग आता है।

इसी प्रकार नियत पर्याय के प्रातपक्ष भूत अनियत पर्याय के अभाव में नियत पर्याय के अभाव का प्रसंग आता है। किन्तु नियत पर्याय है अनः उन के प्रतिपक्ष रूप अनियत पर्याय भी अवश्य होनी चाहिये। जिस प्रकार संसार में ऐसी राशियाँ देखी जाती हैं जो व्यय क होन पर समाप्त (शय) हो जाती हैं तो उनकी प्रतिपक्ष ऐसी राशियाँ भी होनी चाहिये जो आय रहित व्यय के होते रहने पर भी क्षय (समाप्त) न हों।

“अह्वा षण सते पि अज्जस्यो को पि रामी अस्थि, सज्जस सत्पडिक्खण्णसुखलभादो ।”

जर्घ्य त्र्यय के होते रहने पर भी सदा अक्षय रहने वाली कोई राशि है जो कि क्षय होनवाली सभी राशियों के प्रतिपक्ष व समान पाई जाती है।

इसमें सिद्ध है कि नियत पयाय की प्रतिपक्ष अनियत पर्याय अत्रय है।

प्रश्न नं ११—अकाल मरण नहीं है, क्योंकि सब जीवों का मरणकाल नियत है। जब सब जीवा का मरण काल नियत है तो न तो कोई किसी को मार सकता है और न रक्षा कर सकता है।

उत्तर—देव, नारकी, भोगभूमिया तथा चरमोत्तम शरीर वालों का अकाल मरण नहीं है, उनका मरण काल व्यवस्थित है, क्योंकि वे अनपवर्त्य जायु वाले हैं। कहा भी है—

“ओषपादिक चरमोत्तमहासंख्ययजपायुषोऽनपवयायुष ॥”

अर्थात्—उपपाद जन्मवाले, चरमोत्तम देह वाले और असंख्यात वर्ष की आयु वाले जाय अनपवर्त्य जायु वाले होते हैं।

इस सूत्र की सामर्थ्य से यह सिद्ध होता है कि ओषपादिक आदि सत्रय मंमारी जीवा अर्थात् कर्मभूमिया मनुष्य तिर्यचों का विष शम्भ प्रहारान्ति के द्वारा अकाल मरण अर्थात् अनियत-ममय पर मरण हो सकता है। श्री १-८ बुन्दुद आचार्य ने अकाल मरण के निम्न कारण कहे हैं—

विमत्रेयगरत्तमग्रयमयन्त्यगदृशसन्निडेसाण ।

आहारम्भाण गिरोहणा त्तिजए जाऊ ॥ २५ ॥

हिमजलणमलिलगुरुवरपव्ययतरुहणपड्डणभंगेहि ।

रसविज्जजोयघारण जणयपसगेहि विनिहेहि ॥ २६ ॥

[भाव पाठ्य]

मरण देगा जता है। जिनका मरण शाल आ गया त्का तो उस समय मरण होगा ही अतः यह रोग प्रहार आदि की अपेक्षा नहीं रहता अर्थात् रोग प्रहार आदि होगा तब भी मरण होगा और रोग प्रहार आदि नहीं होगा तब भी मरण होगा क्योंकि उसका मरण काल व्यवस्थित (नियत) है। जिनके मरणकाल का रोग प्रहार आदि से अवयव व्यतिरेक है अर्थात् रोग प्रहार आदि होगा तो मृत्यु काल उत्पन्न हो जायगा, यदि रोग प्रहार आदि नहीं होगा तो मरण काल उत्पन्न नहीं होगा, घन का मृत्यु काल अव्यवस्थित (अनियत) है अ यथा रोग प्रहार आदि की निरपेक्षता का प्रसंग आ जायगा किन्तु अकाल मृत्यु के अभाव में आयुर्वेद की प्रमाणभूत चिकित्सा तथा शल्य चिकित्सा (आपरेशन) की सामर्थ्य का प्रयोग किस पर किया जायगा ? क्याकि चिकित्सा आदि का प्रयोग अकाल मृत्यु के प्रतीकार के लिये किया जाता है।

“अथचिदायुर्द्वयतरंगो हतो बहिरंगो पथ्याहारादी विद्विन्ने चावनस्याभावे प्रसवते तत्संपादनाय जीवनाधानमेवापमृत्योरस्तु प्रतिधार ।”

अथात् - आयु का उदय अतरंग कारण होने पर भी किन्तु पथ्य आहार आदि के विच्छेद रूप बहिरंग कारण मिल जाने से जीवन के अभाव का प्रसंग आ जाता है। ऐसा प्रसंग आने पर जीवन के आवार भूत आहारान्त्रिक जटाल मृत्यु का प्रतीकार है।

यदि अकाल मरण का मृत्यु काल में व्यवस्थित (नियत) होता तो अकाल मृत्यु का प्रतीकार नहीं हो सकता था, जैसे काल मरण का मृत्युकाल व्यवस्थित है उसका प्रतीकार नहीं हो सकता। किन्तु अकाल मृत्यु का प्रतीकार हो सकता है अतः

अकालमृत्यु का मृत्युकाल अव्यवस्थित (अनियत) है, यह मृत्यु काल बहिरंग विशेष कारणों से उत्पन्न होता है। श्री १०८ विद्यानन्द आचार्य ने भी काल मरण का मृत्युकाल व्यवस्थित कहा है और अकाल मरण का मृत्युकाल उत्पन्न होता है ऐसा कहा है।

काल मरण का मृत्युकाल व्यवस्थित (नियत) है इसलिए हम से रक्षा नहीं की जा सकती किन्तु अकाल मरण का मृत्युकाल अव्यवस्थित है अतः उससे रक्षा संभव है और इसलिये न्याय धर्म का उपदेश दिया गया है। श्री १०८ कुण्डल आचार्य ने भाग्यपाण्डु गाथा १३१ में मुनियों को छह काय के जीवों की न्याय करने का उपदेश दिया है, और पाण्डु गाथा २५ में "धर्म वह ही है जो न्याय करि विशुद्ध है" ऐसा कहा है और शीलपाण्डु गाथा १८ में जीव हत्या का शील (सुभाव) का परिहार बतलाया है। यदि अकालमरण का मृत्युकाल अव्यवस्थित न माना जाय तो न्यायधर्म का उपदेश तथा चिकित्सा शास्त्र व्यर्थ हो जायेंगे। श्री १०८ श्रुत मातर जी मूरि ने तत्त्वार्थवृत्ति में इसी बात को कहा भी है—“अथवा न्यायधर्मापदेशचिकित्साशास्त्र च व्यर्थ स्यात्।”

जिन का मृत्युकाल व्यवस्थित है अर्थात् नियत है उन को हम नियत काल में पूर्व कोई नहीं मार सकता अर्थात् हिंसा नहीं हो सकती, किन्तु जिन का मृत्युकाल अव्यवस्थित है (अनियत है), प्रह्वप्रहार आदि द्वारा मृत्युकाल उत्पन्न होता है उन की हिंसा स्वप्नप्रहार आदि द्वारा संभव है। श्रीलिय द्रव्य प्रातःमण प्रत्याख्यान द्वारा द्रव्य हिंसारूपी पाप के त्याग का उपदेश दिया गया है और जबतक द्रव्य हिंसा के त्यागरूप द्रव्यप्रतिभरण द्रव्यप्रत्याख्यान नहीं होगा हम समय तक

नियतिवाद

भाष्य प्रतिबन्धन और भाष्य प्रत्याख्यान भी नहीं हो स
 पयोंत्रि द्वय और भाष्य स निर्मात्रि तैमितिक समर्थ है। (स
 मार जात्सरयाति गाथा २२२-२२५)

दूसर हिमा प अभाव स षय का जमाय हो जा
 (हिमाऽभावाद्द्वयस्य षयस्याभावः) और षय के अभाव
 मोक्ष का भी अभाव हो जायगा, क्योंकि षयपूर्वक मोक्ष ह
 है। मोक्षके अभाव स मोक्षमार्ग और मोक्षमार्ग क उपदेश
 भी अभाव हो जायगा।

प्रश्न न० १२-समयमार गाथा २३७-२६८ में भी तु
 कुन्तु भगवान् न यह कथन किया है कि जो यह मानता है
 मैं पर जीवां को मारता हूँ, जिलाता हूँ, दुग्घो परता हूँ तु
 करता हूँ वह मूढ अज्ञानी है और इस विपरीत अर्था
 जो यह मानता है कि मैं पर जीव को नहीं मारत
 नहीं जिलाता, दुग्घो नहीं परता सुग्घो नहीं करता, ष
 क्षानी है। इसलिय जिसको जीवदया या हिमा की भडा
 वह तो मिथ्या-वृष्टि है।

उत्तर जो जीव दया स धर्म मानता है और हिमा को
 पाप मानता है वह मिथ्या-वृष्टि है ऐसा अभिप्राय समयसार
 गाथा २५७-२६८ का नहीं है, इन गाथाओं स तो जीव हिमा
 दया आन्ति मन्थ जी जा अयवसाय भाष्य (अटकार भाष्य) वस
 अध्यवसाय को अज्ञान कहा है।

श्री १०/ अमृतचन्द्र आचार्य ने निम्न टीका द्वारा यही
 बात कही है।

'परजीवाणं' हिनस्ति, परजीवैहिस्य चाहमित्यध्यवसाये
 धवमज्ञानं, स तु यस्वास्ति सोऽकानित्वा मिथ्या-वृष्टिः । यस्य तु
 नास्ति स ज्ञानित्वात्मन्यवृष्टिः ॥'

अर्थ—'मैं पर जीवों को मारता हूँ और पर जीव मुझे मारते हैं' ऐसा अध्यवसाय (अहंकार भाव) नियम न अज्ञान है। वह अध्यवसाय जिसके है वह अपनातीपने के कारण मिथ्या दृष्टि है और जिसके वह अध्यवसाय भाव नहीं है वह ज्ञानी है।

यहाँ ऐसा जानना-निश्चय नय तें अर्थात् सद्भूत व्यवहार नय से तो प्रत्यक्ष द्रव्य जिस भाव रूप (पयायरूप) परिणाम में तिम भाव (पयाय) का करता है पर का करता नही है। सो इस नय की अपेक्षा जो पर के द्वारा पर का मरण माने है सो अज्ञानी है। किन्तु व्यवहारनय (अमद्भूत व्यवहार नय) से पर के द्वारा पर का मरण मानना यथार्थ है—सम्यग्ज्ञान है क्योंकि अनिमित्त नैमित्तिकभाव तें परद्रव्य पर का रक्षा है। जैसे श्री १०८ त्रिनेत्र भगवान् दिव्यध्वनि (पीरगाडिक शब्द) के कर्ता है, श्री गौतमगणधर द्वादशाङ्गमयी द्रव्यश्रुत के कर्ता हैं और श्री १०८ कुन्दकुन्द भगवान् श्री समयसार ग्रन्थ के कर्ता हैं। यदि ऐसा न माना जाय तो दिव्यध्वनि, द्वादशाङ्ग और समयसार ग्रन्थ की प्रमाणता के अभाव का प्रमाण आ जायगा। श्री १०८ कुन्दकुन्द आचार्य ने भी इसी बात को कहा है—

“बोन्टामि समयपाहुडामिणमो सुयजेवलीभणिय ॥१॥”

[समयसार]

अर्थात्— श्री १०८ कुन्दकुन्द आचार्य प्रतिज्ञा करते हैं कि मैं उस (समयसार ग्रन्थ) को कहूँगा जिसका कथन केवली (केवल ज्ञानी), श्रुतकेवली (गणधर) और श्रुत (द्रव्यश्रुत द्वादशाङ्ग) द्वारा किया गया है।

समयसार भाषा २७२६१ के द्वारा श्री १०८ कुन्दकुन्द आचार्य न यह नहीं कहा कि सर्वथा पर का मरण या रक्षा नहीं

हो सकती। क्योंकि उद्धार के स्वयं भावपाहुडगाथा २५ व २६ में परम द्वारा परकी आयु का व्युच्छ्रय या क्षय कहकर परके द्वारा परका मरण स्वीकार किया है (प्रदन न ११ में ये गाथा उद्धृत है), तथा निम्न गाथाओं में भी इसी बात को कहा है—
 मरिचिपागाहागे अणतभवसायर भमतेण ।

भोयमुहपारणट कण य निविहेण सयलजीवाण ॥ १३०

पाणिवट हि महाजम चउगासीलररजोणि मडमभिम् ।

उपपज्जन् मग्गो पत्तामि निरतर दुक्खर ॥ १३३ ॥ (भावपाहुड)

अर्थात्—अनन्त भवसागर में ध्रमते हुए इस जीव ने भोग मृत्यु के कारण के लिये मगस्त प्रसं स्थावर जीवों के दसविध प्राणों का भक्षण मनवचन काय के द्वारा किया और प्राणोबध अर्थात् प्राणीघातकरि धौरासी लाप योनियो में जन्म मरण के द्वारा निरतर दुःख पाया

इसी प्रकार भी बुद्ध आचार्य ने जीव रत्ना (दया) का उपदेश दिया है।

हृत्तजीव सुक दय " [भावपाहुड गाथा १३१]

धम्मो म्यावमुटो" [भावपाहुड गाथा २१]

'जीवम्या य सीलम परिघारो ।" [शीलपाहुड गाथा १८]

अर्थात्—मन वचन काय करि छत्र काय (पाच स्थावर और एक श्रम काय) की दया कर।

धर्म यही है जो म्या करि विमुक्त है।

जीव दया शील (म्यमाव) का परिवार है।

इस प्रकार भा १८ बुद्ध भगवान ने एक जीव के द्वारा दूसरे जीवों के पापघान को स्वीकार करने हुए उनको पाप तथा

समाप्त परिभ्रमण का कारण क्या है तथा उत्पन्न हुए त्रासों की रक्षा करने का उपदेश दिया है और अंततः ही चर्म तथा आम स्वभाष्य बतलाया है।

इसमें यह भी सिद्ध होता है कि पत्तों के अन्त भी हैं, क्योंकि पर का प्राप्त करना तो दया करना वगैरह मार्ग हैं। इन दोनों मार्गों में से जोर अपनी इच्छा अनुसार चिन्ता भी मार्ग को महत्त्व कर सकते हैं। इन दोनों मार्गों में से कोई एक मार्ग को महत्त्व करता है तो यह संसार में अज्ञान के द्वारा दुःख उत्पन्न है और यदि यह दयामयी परम मार्ग का पालन होता है तो यह समाप्त भ्रमण का मुक्त हो अनन्त मुक्त हो जाता है।

मोक्षमार्ग और नियतिवाद (क्रमबद्ध पर्याय)

प्रश्न नं. १२-सर्व पर्यायों की सर्वथा नियति (क्रमबद्ध) मानने से मोक्ष मार्ग में बाधा आती है ?

उत्तर-सर्व पर्यायों को सर्वथा नियति (क्रमबद्ध) मानने से मोक्ष मार्ग संभव नहीं है। क्योंकि 'सम्यग्दर्शनं ज्ञानं चारित्र्याणि मोक्षमार्गः।' अर्थात् सम्यग्दर्शनं सम्यग्ज्ञानं और सम्यक् चारित्र्यं ज्ञानात् रत्नत्रयं मोक्षमार्गः है किन्तु सर्व पर्यायों को सर्वथा नियति (क्रमबद्ध) मानने से सम्यक्चारित्र्य अर्थात् समय व तप संभव नहीं हैं। समय का लक्षण निम्न प्रकार है

जतुष्टुपादितं मनस ममितिषु साधो प्रवर्तमानस्य ।

प्राणोद्द्वयपरिहारमयमाहुर्महामुनयः ॥८६॥ (पद्मनिदपञ्च)

अर्थात्- जिस का मन जीवानुष्कार में भीता है तथा जो इस भाषा ऐषगा जाणनिक्षेपण उत्सर्गं जाति पाच समितिषा म प्रवर्तमान है उसे साधु के द्वारा जो पट्काय जीवों की रक्षा और अपनी इन्द्रिया का दमन किया जाता है उस गण धर देवाणि महामुनि संयम कहते हैं।

'इच्छा निरोध तप' अर्थात् इच्छाओं का निरोध तप है

यदि सर्व पर्यायों नियत हों तो पट्काय जीवों को रक्ष. अपनी इन्द्रिया का दमन और अपनी इच्छा का निरोध संभव नहीं है। क्योंकि सब जीवों का मृत्यु काळ तथा कारण नियत

होने से उनकी रक्षा नहीं हो सकेगी। त्रिद्वयों की अपवाय म प्रवृत्ति रूप पर्याय नियत होने से त्रिद्वयों का तमन नहीं हो सकेगा तथा इच्छाजायी - वृत्ति रूप पर्याय नियत होने से इच्छा निरोध रूप तप नहीं हो सकेगा इस प्रकार नियत पर्याय (ब्रमषट्क पर्याय) के मानने से संयम व तप का अभाव हो जाने से रत्नत्रय रूप मोक्षमार्ग का भी अभाव हो जाना है।

भोगभूमिया मनुष्या म उनको सायिक सम्यग्दर्शित और उत्तम महान तथा शुभ लक्ष्या वाले हैं। स्त्री प्रकार वैभानिक तथा म असंख्याते तेष सायिक सम्यग्दर्शित हे बहूभूत ज्ञानी है, विशेष शक्ति भी है, तथा शुभलक्ष्या वाला है, किंतु वे देव समय या सकल समय धारण नहीं कर सकते जबकि कर्मभूमिया हीन महान वाले सायापशम सम्यग्दर्शित उत्तम ज्ञानी उनको मनुष्य मयल समय व त्रिद्वयम धारण करने हैं। इस का कारण यह है कि भोगभूमिया मनुष्यों तथा तेषों का आहार आदि की पर्याय नियत हैं। जो कर्म भूमियों की अनियत है।

जैसे उत्तम भोगभूमिया मनुष्य तीन दिन के अंतराल से अल्प आहार करता है। उसके आहार का समय तथा मात्रा नियत है। जिस दिन उसके आहार का समय नियत है उस दिन यदि वह अनशन करता चाहे तो नहीं कर सकता क्योंकि उसके आहार का काल नियत है उसको आहार करना ही होगा। अंतराल के दिना म यदि वह भोगभूमिया मनुष्य का आहार करना चाहे तो नहीं कर सकता क्योंकि उसके आहार का समय नियत है। इस प्रकार आहार का काल तथा आहार की मात्रा नियत होने से वह अनशन आदि तप नहीं कर सकता। क्योंकि आहार की इच्छा का निरोध नहीं कर सकते। यही कारण है सायिक सम्यग्दर्शन आदि गुण सहित देव म

भोगभूमिया मोक्ष नहीं जा सकते । यदि कर्मभूमिया मनुष्यों की भी आत्मा जाति की पर्याय नियत होती तो वे मोक्ष नहीं जा सकते थे ।

कर्म भूमिया मनुष्य अपनी इच्छा अनुसार दिन में चार चार दस बार भोजन कर सकता है और रात को भी भोजन कर सकता है, उससे आहार की व्यवस्था किसी नियति (क्रमबद्ध पर्याय) के आधीन नहीं है । कर्मभूमिया मनुष्य अपनी इच्छा का निरोध करके एक दिन, एक माह आदि तक भी आहार न करे । इसीलिए कर्मभूमिया मनुष्य समय व तप के द्वारा कर्मा का श्रेय कर सिद्ध अवस्था प्राप्त करते हैं, जबकि देव व भोगभूमिया मनुष्य उससे वंचित रहते हैं ।

रत्नत्रय म तेरह प्रकार का चारित्र्य बतलाया गया है, पाँच महाव्रत, पाँच समिति और तीन गुप्ति । कहा भी है—

पचव्रत ममित्पच गुप्तित्रय पवित्रितम् ।

श्री चारवदनोऽग्नीर्णं चरणं चन्द्रनिर्मलम् ॥ ५ ॥

हिसायामनृते स्तेये मैथुने च परिग्रहे ।

विरतिर्ब्रतमित्युक्तं सर्वसत्वानुकम्पम् ॥ ६ ॥

[ज्ञानार्णव अष्टम सर्ग]

अर्थ—श्री वीर तीर्थंकर भगवान ने पाँच महाव्रत, पाँच समिति और तीन गुप्ति रूप तरह प्रकार का चारित्र्य कहा है । हिंसा, अनृत (मूठ) चोरी, और परिग्रह इन पापा में विरति कहिय त्याग भाव सो व्रत है ।

सर्व पर्याया को नियत मानने में यह चारित्र्य सम्भव नहीं है ।

जैसे भोगभूमिया मनुष्या का मरणकाल व कारण नियत है व भोगभूमिया मनुष्य अपनी आयु पूर्ण होने पर छीन व जन्माइ कारण मिलने पर मरण को प्राप्त होते हैं । उस नियत

काल से पूर्व या अन्त्य कारणों से मरण को प्राप्त नहीं होते। उन भोगभूमियां मनुष्यों का कोई भी घात अर्थात् हिंसा नहीं कर सकती। उन भोगभूमियां मनुष्यों को सर्प सिंह आदि से मृत्यु भय नहीं होता। भोगभूमियां के समान यदि कर्मभूमियां मनुष्य व तिर्यंचा का भी मरण काल व कारण नियत होते तो उनकी भी हिंसा नहीं हो सकती थी और उनका सर्प सिंह शस्त्रप्रहार आदि से मरणमय नहीं होना चाहिये था। इस नियत पर्याय (क्रमबद्ध पर्याय) व द्वांग हिंसा के अभाव का प्रसंग आता है और हिंसा के अभाव में हिंसा त्याग रूप घ्न के अभाव का प्रसंग आता है। जब हिंसा ही नहीं तो त्याग किमका। ये चार घ्नो जो कि अहिंसाघ्न के बाद स्वरूप हैं के भी अभाव का प्रसंग आता है। इस प्रकार पंच घ्न रूप चारित्र के अभाव में रत्नत्रय रूप मोक्ष मार्ग का भी अभाव हो जायगा।

कर्म भूमियां मनुष्य व तिर्यंचो का सर्प, सिंह, शस्त्र प्रहार आदि द्वारा अनियत काल में मरण हो जाता है अतः हिंसा त्याग रूप घ्न अर्थात् चारित्र का उपदेश दिया गया।

इस प्रकार सर्व पर्यायों को नियत मानने से रत्नत्रय रूप मोक्ष मार्ग का निषेध होता है।

सबज्ञता और नियतिवाद (क्रमबद्ध पर्याय)

प्रश्न न (२)—जब सर्वज्ञ ने सर्व द्रव्या की सर्व पर्याया को जान लिया है और सर्वज्ञ ज्ञान सत्य है इसलिये अतः क्रम से सर्वज्ञ ने भविष्य पर्यायों का जाना है वसी क्रम से वसी समय उही कारणों से वे पर्याय होंगी, क्योंकि सर्वज्ञ का ज्ञान अन्यथा हो नहीं सकता। अतः सर्वज्ञ की अपेक्षा सब पर्यायें नियत (क्रमबद्ध) हैं। छद्मस्थों (अल्प ज्ञानियों) के द्वारा सर्व पर्यायें जानी नहीं जा सकती अतः उनकी अपेक्षा पर्यायें अनियत हैं इस प्रकार ऐनात का दूषण भाँ दूर हो जाता है। यदि छद्मस्था के समान सर्वज्ञ ने भी भविष्य पर्यायों को अनियत रूप से जाना तो सर्वज्ञ के भक्त प्रत्यक्ष ज्ञान की विशेषता क्या रही? अतः जो सर्व पर्याया को नियत (क्रमबद्ध) नहीं मानते वे सर्वज्ञ को नहीं मानते।

उत्तर— सर्वज्ञ ज्ञान का आधार पर मात्र नियति अनियति का ही विवाद नहीं, किन्तु अनादि सान्नि अनात व सा त आदि का विषय म भी विद्या है। कुछ विद्वानों का कहना है कि सर्वज्ञ की अपेक्षा तो भूतकाल सादि है और भविष्यकाल सात्त है, क्योंकि सर्वज्ञ न सर्व भूतकाल का समय को और भविष्यकाल का समयों को प्रत्यक्ष जान लिया है। यदि सर्वज्ञ न सर्व भूतकाल को नहीं जाना और सर्व भविष्य काल को नहीं जाना तो सर्वज्ञ ज्ञान की विशेषता के अभाव का प्रमग

आता है। अल्पज्ञ की अपेक्षा भूतराल अनादि जीव भविष्य काल जनत है। इसी प्रकार सर्वज्ञ न समस्त आकाश द्रव्य को जान लिया है अर्थात् उसका जोर—छोर जान लिया है अ यथा आकाश द्रव्य के आकार तथा प्रदेश का प्रमाण का कथन असंभव था इसलिये सर्वज्ञ की अपेक्षा आकाश द्रव्य मात्र है किन्तु अल्पज्ञ की अपेक्षा जनत है। सर्वज्ञ ने प्रत्येक द्रव्य की सर्व पर्यायों को जान लिया है इसलिये सर्वज्ञ ज्ञान का अपेक्षा प्रत्येक द्रव्य की सर्व पर्यायों मानत है किन्तु अल्पज्ञ की अपेक्षा जनत है। सर्वज्ञ ने समस्त जीव राशि और पुद्गल राशि को जान लिया है इसलिये सर्वज्ञ की अपेक्षा समस्त जीव राशि और पुद्गल राशि सा न है किन्तु अल्पज्ञ की अपेक्षा जनत है। सर्वज्ञ अदृशिम जिनषिम्भ सुदर्शन मेरू जादि की व्यञ्जन पर्याय को मादि सात रूप से जानते हैं किन्तु अल्पज्ञ इनकी अनादि अनन्त रूप से जानता है। सर्वज्ञ यह भी जानते हैं कि सर्व प्रथम किम श्रेत्र म कितनी अवगात्ता वाले सिद्ध रूप थे, क्योंकि संसार पूर्वक सिद्ध होने से समस्त सिद्धों की सिद्ध पर्याय मादि है। सर्वज्ञ भूत व भविष्य पर्यायों को भी वर्तमान पर्याय के समान व्यक्त रूप से जानते हैं। यदि ऐसा न माना जायगा तो सर्वज्ञ के अभाव होने का उन विद्वानों को भय लगा रहता है।

इन अध्यात्मामासवादी विद्वानों ने न तो सर्वज्ञ का स्वरूप ही यथार्थ जाना और न वस्तु स्वरूप ही यथार्थ जाना।

मति, भूत, अवधि, मन पर्यय और केवल ये पाँचों ज्ञान प्रमाण हैं, क्योंकि ये पाँचों ज्ञान यथार्थ रूप से जानते हैं अ यथार्थ नहीं जानते। जिस प्रकार नय विकलादेश है अर्थात् किसी एक धर्म की मुख्यता से वस्तु को जानता है उस प्रकार प्रमाण

ज्ञान किसी एक धर्म की मुख्यता स वस्तु को नही जानता, क्योंकि प्रमाण मन्त्रादेश है। कहा भी है—

“मतिभूतावधिमन पर्यवसेनानि ज्ञानम् ॥ ८ ॥ तत्र माणे ॥१०॥” [तत्त्वार्थसूत्र प्रथम अध्या०]

“सकलवस्तुमाह्न प्रमाण । वस्तुवेकदेशमाह्नको नयः ।”

वस्तु के एक दश की मुख्यता नय में होती है अतः भिन्न-भिन्न नयों को राष्ट्र स अपेक्षा कृत कथन संभव है। जैसे, द्रव्यार्थि नय की अपेक्षा स वस्तु अनित्य है। प्रमाण सकल वस्तु को ग्रहण करने वाला है इसलिये वह वस्तु का नित्य अनित्य रूप से ग्रहण करता है अतः एक प्रमाण की अपेक्षा वस्तु नित्य का और अन्य प्रमाण की अपेक्षा वस्तु अनित्य हो ऐसा नहीं है। प्रमाण ज्ञानों में परस्पर सापेक्ष कथन संभव नहीं है, क्योंकि प्रत्येक प्रमाण ज्ञान मन्त्र वस्तु माह्न है। सम्यग्ज्ञान अल्पज्ञ का ज्ञान भी सम्यग्ज्ञान है और सर्वज्ञ का ज्ञान भी सम्यग्ज्ञान है। इसलिये अल्पज्ञ की अपेक्षा अनादि स अतः मानना और वही हो सबज्ञ की अपेक्षा सादि स सात मानना ठीक नहीं है। अनादि है उसका अल्पज्ञ भी और सर्वज्ञ भी दोनों अनादि, रूप से जानते हैं, आर जा सादि है उसको अल्पज्ञ भी और सर्वज्ञ भी दोनों सात् रूप में जानते हैं। एक ही वस्तु को सर्वज्ञ सादि रूप में जाने और अल्पज्ञ अनादि रूप में जाने एसा संभव नहीं है। क्योंकि दोनों ही का ज्ञान सम्यग्ज्ञान है और सम्यग्ज्ञान वही है जो यथार्थ जाने।

कहा भी है—

अन्यूनमनतिरिक्त याथावयं विना च विपरीतान् ।
नि सन्दृष्टं यद् यदाहस्तज्ञानामागमिन ॥४२॥ [रत्न करण्ड भववाचार]

अर्थात्—जो वस्तु को युनता अधिकता विपरीतता रहित जैसा का वैसा जानता है वह सम्यग्ज्ञान है ।

मृतकाल को भ्रुतज्ञानी यत्नि अनादि रूप से जानता है ता सर्वज्ञ भी उम को अनादि रूप से जानता है । अनाल मरण आदि पर्याय को भ्रुतज्ञानी अनियत पर्याय रूप से जानता है अर्थात् अकाल मरण का कोई नियत समय नहीं है जब कभी भी गङ्गमहार आदि बाह्य विशेष कारणों के मिलन पर अनाल मृत्यु काल उत्पन्न हो सकता है, इसी प्रकार सर्वज्ञ भी जानता है । मात्र परोक्ष और प्रत्यक्ष का अंतर है ।

सुक्केषु लोच नाण श्रेष्ठिगये सरिमाणि होनि बोहानो ।

सुदणाय तु परोक्षं पञ्चकारं क्वलं एव ॥३२॥ [गो पी]

अर्थ—भ्रुत ज्ञान और क्वल ज्ञान दोनों ही ज्ञान मन्त्र हैं । किन्तु दोनों में अंतर यह है कि भ्रुतज्ञान परोक्ष है और केवल ज्ञान प्रत्यक्ष है ।

जो पर्यायें नियत हैं उन का परोक्ष सम्यग्ज्ञानी भी नियत रूप से जानता है और प्रत्यक्ष सम्यग्ज्ञानी भी नियत रूप से जानता है । जो पर्यायें अनियत अर्थात् जिनका कोई नियत समय काल नहीं है उनको परोक्ष सम्यग्ज्ञानी भी अनियत पर्याय रूप से जानता है और प्रत्यक्ष सम्यग्ज्ञानी भी अनियत-पर्याय रूप से जानता है ।

यदि श्री सर्वज्ञ त्वे सर्व पर्याया ना नियति (क्रमबद्ध पर्याय) रूप से जानते हैं तो ये नियतिवात् (क्रमबद्ध पर्याय) को एतान्त मिथ्यात्व कभी नहीं कहते । एक भक्त पुरुष भी जब जैसा स्वयंता जानता है वैसा कहता है कि तु श्री सर्वज्ञ देव सर्व पर्यायों को नियति रूप से देख जानें और उपदेश यह देवों कि सर्व पर्यायों को नियति मानने वाला मिथ्या नहीं है तब सम्भव नहीं है । क्योंकि सर्वज्ञ अथवा वादी नहीं होते ।

“तान्मथा वादिनो जिना ।” [आलाप पद्धति]

भी सर्वज्ञ देव की दिव्य रश्मि अनुसार भी गौतमगण्डपर न
 दादशास्त्र की रचना की है उसका दृष्टिवाद बाहरपे अज्ञ में पर
 समय अर्थात् मिथ्यामतों का कथन है। उन मिथ्यामतों में स
 एक मिथ्यामत नियतिवाद भी है। जो जमा मानता है कि
 जिसका जिन समय जिस स्थान पर जिन कारणों के से जा
 जाना है वह उसी काल में उसी स्थान पर उही कारणों के द्वारा
 अवश्य होगा उसको काश् भी टाउन में मर्मर्ष नदी' यह मिथ्या
 दृष्टि है। द्वाशास्त्र के इस कथन से सिद्ध होता है कि भी सर्वज्ञ
 देव ने सर्व पर्यायों का नियति (क्रमबद्ध पर्याय) रूप से नहीं देखा
 है। जैसा कहा है वैसा देखा है। भी सर्वज्ञ न कहा है पर ही
 भी १०८ पुण्यदत्त भूतवती आदि आचार्यों द्वारा रश्मि रंधा द्वारा
 हमको चरलक्ष्य है। किन्तु भी १-८ सर्वज्ञ देव क्या क्या देखा
 रहे हैं और किस प्रकार देख रहे थे ज्ञान रह है वह हमको उर
 लक्ष्य नहीं है। यदि यह उपलब्ध होता तो भी १०८ बुन्दबुन्द
 आदि आचार्य यह कहने कि जो जिन-द्रु भगवान देख प
 जान रहे हैं वह कहता है किन्तु भी १०८ बुन्दबुन्द आचार्य ने
 अनेकों स्थान पर यह कहा है कि भी जिन-द्रु भगवान ने जो कहा
 है वह मैं कहता हूँ अथवा भी जिन-द्रु भगवान ने जमा देगा
 या जाना है।

जो यह कहते या मानते हैं कि सर्वज्ञदेव ने सर्वपर्यायों
 को नियतिरूप से देखा था जाना है ये भी सर्वज्ञ देव को अन्वया
 वादी कहना चाहते हैं अतः यही सिद्ध होता है कि भी सर्वज्ञदेव
 ने सर्व पर्यायों को नियति रूप से नहीं देखा था जाना है क्योंकि
 पन्धाने सर्व पर्यायों को नियति (क्रमबद्ध पर्याय) मानने वाले को
 मिथ्यादृष्टि कहा है।

प्रश्न न १— सर्वज्ञ ज्ञान के अनुसार पर्याय होती हैं और होगी इसालय पर्यायों नियत हैं ?

उत्तर— पर्याय अपने कारण के अनुसार होती हैं। पर्याय के होने में सर्वज्ञ ज्ञान न तो अंतरंग कारण है और न बहिरंग कारण है। क्योंकि सर्वज्ञ ज्ञान का पर पर्यायों के साथ अवयव व्यतिरेक का अभाव है। जैसे सम्यग्दर्शन रूप पर्याय में सात प्रकृतियों का उपशम, क्षयोपशम तथा क्षय तो अन्तरंग कारण है और तत्त्वोपदेश आदि बहिरंग कारण हैं। कहा भी है—

सम्मत्तस्त शिमिच्छि जिणसुत्ता तस्म जाणयां पुरिमा ।

अतरहेयोभणिणा ममणमोहम्म खयपहुणा ॥५३॥ [नियमसार]

इस गाथा में श्री (८) कुन्कुन्द आचार्य ने सम्यग्दर्शन का अंतरंग कारण दर्शन मोहनीय कर्म के क्षय, क्षयोपशम और उपशम को बतहाया है और बहिरंग कारण जैन शास्त्र तथा उनके ज्ञानत वाले पुरुषों को कहा है।

दर्शन मोहनीय कर्म व अनन्तानुबन्धी प्रकृतियों के उपशम क्षयोपशम और क्षय का सम्यग्दर्शन पर्याय के साथ अवयव व्यतिरेक है, क्योंकि दर्शनमोहनीय कर्म की तीन प्रकृतियों और अनन्तानुबन्धी चार प्रकृतियों के उपशम आदि के मद्भाव में सम्यग्दर्शन जाना है और अभाव में सम्यग्दर्शन नहीं होता। जो कारण होता है उस का कार्य के साथ अवयव व्यतिरेक होता है। कहा भी है—

“तच्चादयो न बुद्धिमन्निमित्तमात्तदवयवव्यतिरेकानुपलम्भात् । यत्र यत्रवयवव्यतिरेकानुपलम्भास्तत्र न तन्निमित्तवस्व इष्टम् । यथा घटपटीगरावोदञ्चनान्पि कृषिदागुन्वयव्यनिरयाननुविधायिषु न कुषिदादिनिमित्तमस्वम् । बुद्धिमदवयवव्यतिरेकानुपलम्भानुच्चादिषु । तस्मान् ननु

कत्वामिति व्यापकानुपलम्भ, तत्कारणकत्वस्य तत्रव्यव्यतिरेक
कोपलमेन व्यापनत्वान्मुञ्चाल कारणकस्य घटादेः कुलात्तावप
त्यतिरेकोपलम्भप्रसिद्धे । सर्वत्र बाधकार्भावात् तस्य तद
व्यापकत्वव्यवस्थानात् । [जाप्तपरीक्षा]

अर्थ—शरीरादि मर्बज्ञ इश्वर निमित्तकारणज य नहीं है,
क्योंकि उसका (सर्वज्ञ का) शरीर व साथ अव्यव्यतिरेक का
अभाव है । अर्थात् शरीरादि का सर्वज्ञ निमित्त कारण के साथ
अव्यव्यतिरेक नहीं है और अव्यव्यतिरेक के द्वारा ही कार्य
कारण भाव सुप्रतीत होता है जिसका जिसके साथ अव्यव
व्यतिरेक का अभाव है वह उस ज य नहीं होता । जैसे जुलाहा
आदि का अव्यव व्यापक न रखने वाले घड़ा, घड़िया, सफ़ोर
आदि जुलाहा आदि निमित्तकारणज य नहीं हैं । सर्वज्ञ
निमित्त कारण व अव्यव व्यतिरेक का अभाव शरीर आदि के
साथ है इसलिये शरीरात्मिक सर्वज्ञ निमित्तकारण ज य नहीं है।
इस प्रकार व्यापकानुपलम्भ सिद्ध होता है, अर्थात् इस अनुमान
म शरीर आदि कार्यों के साथ सर्वज्ञ की निमित्तकारणता का
अव्यव्यतिरेक नहीं बनता । और यह निश्चित है कि जो जिस
का कारण होता है उसका उससे साथ अव्यव व्यतिरेक अवश्य
पाया जाता है । जैसे कुम्हार से उत्पन्न होने वाले घड़ा आत्मिक
म कुम्हार का अव्यव्यतिरेक स्पष्टतः प्रसिद्ध है । सब जगह
बाधकों के अभाव में अव्यव व्यतिरेक कार्य के व्यापक
व्यवस्थित होते हैं ।

यद्यस्मिन् सत्येषु भवति नासति तत्तस्य कारणमिति न्यायात्
॥ [धवल पु० १० पृ० २८०] अर्थात्—जो जिस के होने पर
ही होता है और जिसके न होने पर नहीं होता है वह उसका
कारण होता है, ऐसा वाय है ।

इस आर्ष से सिद्ध है कि त्रेवलज्ञान पर द्रव्यों के परिणामन में कारण नहीं है इसलिए सर्वज्ञ ज्ञान के अनुसार पर्याय उत्पन्न होती है या उत्पन्न हागी यह कहना ठीक नहीं है क्योंकि पर्यायों (कार्य) अपने अपने कारणों के व्यापार के आश्रित उत्पन्न होती हैं।

“तद्व्यापाराश्रितं हि तद्भावभावित्यम् ॥३१-३९॥ अथय व्यतिरेकसमधिगम्यो हि सर्वत्र कार्यकारणभाव । तौ च कार्यम् प्रति कारणव्यापारसंयपेक्षानैवोपपत्ते ते कुलालस्येव कलश प्रति

[प्रमथरत्नमाला]

अर्थ—कारण व्यापार के आश्रित ही कार्य का व्यापार हुआ करता है। जहाँ सर्वत्र कार्य कारण भाव अथय व्यतिरेक से जाना जाता है। सौ य दोनों कार्य क प्रति कारण के व्यापार की अपेक्षा में ही घटित होते हैं। जैसे कुम्हार का घट के प्रति अथय व्यतिरेक पाया जाता है अर्थात्-कुम्हार क होन पर ही कलश (घट) की उत्पत्ति होती है और कुम्हार क अभाव में कलश की उत्पत्ति नहीं होती है।

“कारण-कृमाणुसारी कञ्ज-कमो । कारणव्यापारमाणुसारी चय कारियअप्यावहुगमिति ।” [धवल]

अर्थ—जिस क्रम में कारण मिलते हैं। उसी क्रम से कार्य होता है। कारण जल्पवहुत्व के अनुसार ही कार्य में जल्प बहुत्व होता है।

इस त्रेवलज्ञान के अनुसार पर्यायों होंगे। ऐसी मायना मिथ्या है, क्योंकि इसमें कारण विपर्याय है।

यदि सर्व पर्यायों को सर्वथा नियत माना जाये, तो कारण का कार्य के साथ अथय व्यतिरेक सिद्ध नहीं हो सकता। सर्व पर्यायों के नियत मान लेने पर यह नहीं कहा जा सकता कि

कारण नहीं मिलेंगे तो कार्य नहीं होगा। क्योंकि जिस प्रकार कार्य का समय, क्षेत्र व कारण आदि सब नियत हैं, उसी प्रकार उन कारणों की उस समय की पर्याय क्षेत्र आदि सब नियत हैं जिस समय जिस क्षेत्र में जिस पर्याय का उत्पन्न होना नियत है उसी समय उसी क्षेत्र में उस पर्याय के नियत कारण का होना भी नियत है जैसे जिस समय जिस क्षेत्र में जिस मिट्टी की घट रूप पर्याय नियत है उस समय उस क्षेत्र में निम्न कुम्हार आदि कारण रूप से अवश्य होंगे। इस सर्वथा नियति में ऐसा नहीं माना जा सकता कि यदि कुम्हार आदि निमित्त नहीं होंगे तो घट कार्य भी नहीं होंगे। इस प्रकार नियति पर्याय (कर्मबद्ध पर्याय) के सिद्धांत में कारणों के साथ कार्य का अवयव व्यतिरेक मिश्रण होने से कारण-कार्य भाव भी सिद्ध नहीं होता। उदा भी है—

“अवयवव्यतिरेकसमविगम्यो हि हतु कर्मभाव सर्व एव तमवरेण हेतुना प्रतिज्ञा मात्र एव कस्यचित् सा वस्तुचिन्ताया मनुष्ययोगनीति।” [मूळाराधना]

अर्थ—जगत में पदार्थ का संपूर्ण काय कारण भाव अवयव व्यतिरेक में जाना जाता है। अवयव व्यतिरेक के बिना कोई पदार्थ किसी का कारण मानना केवल प्रतिज्ञा मात्र ही है, ऐसी प्रतिज्ञा वस्तु के विचार समय (काय की उत्पत्ति) में कुछ उपयोगी नहीं है।

प्रश्न १ १५ - सर्वज्ञ भविष्य पर्यायों को शक्ति रूप से जानते हैं या व्यक्ति रूप से ?

उत्तर - प्रश्न न १३ के उत्तर में यह सिद्ध हो चुका कि केवलज्ञान सम्यग्ज्ञान है अतः जैसी पर्याय हैं वसुको उसी

रूप से जानता है। वर्तमान पर्याय द्रव्य म व्यक्त रूप होती है और अन्य पर्याय रूप परिणमन करने की शक्ति होने से ये पर्याय शक्ति रूप से होती हैं व्यक्त रूप म नहीं। जिस रूप से पर्याय हैं उसी रूप से सर्वज्ञ जानता है। जो पर्याय द्रव्य म व्यक्त हैं उनसे व्यक्त रूप से जानता है और द्रव्य म जिन पर्याय रूप परिणमन करने की शक्ति है उस परिणमन शक्ति की शक्ति रूप से जानता है। इसीलिए वर्तमान पर्याय ग्रहण पूर्वक ही उन शक्तियों का ग्रहण होता है।

‘वर्तमान पर्यायाणामय किमित्यर्थत्वमित्यत इत चेत् न, ज्येते परिच्छिद्यत इति... न्यायनस्तत्रार्थत्वोपलम्भात्। तन्ना गतातीतपर्यायष्वपि समानामति चेत्, न, तत्प्रहणम्य वर्तमानार्थग्रहण पूर्वस्त्वान्।’

[जय घबला]

अर्थ इस प्रकार है -)

शंका केवल वर्तमान पर्याय को ही अर्थ क्यों कहा जाता है।

समाधान - नहीं क्योंकि जो जाना जाता है उसे अर्थ कहते हैं। इस व्युत्पत्ति के अनुसार वर्तमान पर्याय म ही अर्थपना पाया जाता है।

शंका—यह व्युत्पत्त्यर्थ अनागत और अतीत पर्यायों में भी समान है। अर्थात् जिन प्रकार उपर की व्युत्पत्ति के अनुसार वर्तमान पर्याय म अर्थपना पाया जाता है उसी प्रकार अनागत और अतीत पर्यायों में भी अर्थपना मभव है।

समाधान—नहीं, क्योंकि अनागत और अतीत पर्याय का ग्रहण वर्तमान अर्थ के ग्रहण पूर्वक होता है। ज्यों द्रव्य में अतीत और अनागत रूप परिणमन करने की शक्ति है, वैसे वर्तमान अर्थग्रहणपूर्वक द्रव्य की इस शक्ति का ग्रहण होता है।

इस जार्ज वाक्य मे इनना स्पष्ट हे कि वर्तमान पचाय को ही जार्ज संज्ञा है, भूत और भविष्य पर्याया को अर्थ सज्ञा नही है, क्यकि जो जाना जाता है यह अर्थ है।

एव अर्थ मे नाना रूप परिणमन करन की शक्तियाँ हानी है। जैसी द्रव्य क्षेत्र काल भव और भावादि रूप मामपी प्राप्त हा जायगी उस रूप जार्ज का परिणमन हो जायगा। जैसे तदुल मे चूर्ण रूप हान की शक्ति भी है, भाव रूप होने का शक्ति भी है जलरर राग्य रूप हाने की शक्ति भी है, अन्य नाना शक्तिया उस तदुल रूप अर्थ मे है। जिस प्रकार की द्रव्य-क्षेत्र-काल भव-भावादि रूप मामपी प्राप्त होगी उस रूप तदुल का अर्थ परिणमन हा जायगा उस परिणमन को नदू जाति कोइ भी रोकने मे समर्थ नही है।

कालाहलजुत्ता णाणासत्तीहिमजुदा अस्था ।

परिणममाणा हि मय ग सक्कणे सो वि वारेडु ॥ २१९ ॥

[स्वा का ज]

टीका—'कालाहलजुत्ता' कालद्रव्यक्षेत्रभवभावादि-मामपीपाना । 'नानाशक्तिमि अनेक समर्थताभि नानाप्रकार स्वभावयुताभि सयुत्ता । यथा तण्डुला ओन्नशक्तियुत्ता अधनाग्निस्थालीजलाग्निमामपी प्राप्य भक्तपरिणाम लभन्त । नत्र भक्तपर्याय तण्डुलानामुभयकारणे मति कोडुपि निषेधु न शक्नोतीति भाष ॥

अर्थ—नाना शक्तिया से सयुक्त अर्थ काठ जाति मामपी क मिलने पर स्वय परिणमने करता है उस परिणमन को कोई भी नही रोक सकता ।

इस वाक्य का यह अभिप्राय है कि अर्थ मे नाना रूप परिणमन करने की शक्तिया है किन्तु जैसी द्रव्य क्षेत्र काल भव भाव

रूप सामग्री प्राप्त होगी, हम मन्त्रों के द्वारा वह अर्थ का परिणमेगा अथ नहीं परिणमेगा उसे बताने का उद्देश्य नहीं है। इंधन, अग्नि, पत्तीली, लकड़ों के रूप में जो वह तद्बुल ही भाव रूप परिणमेगा, अतः ही अग्नि का रूप नहीं परिणमेगी। अतः ही अग्नि के रूप के सिद्धि जान पर तद्बुल के भाव रूप परिणमेगा ही अग्नि के रूप की समर्थ नहीं है।

इस प्रकार नियति (कर्मबद्धत्व) का अर्थ ही भी प्रमाण से सिद्ध नहीं होता, वह मन्त्रों के द्वारा ही अग्नि के रूप पर्यायों नियत है और वह ही अग्नि के रूप की मायता सम्यक्त्व है।

अ भा व दि जैन शास्त्रिपरिपट्ट की पिठली पुस्तको पर सम्मतिया

“शास्त्रिपरिपट्ट स प्रकाशित ट्रेक्ट प्राप्त किये। विविध विषय पर प्रकाशित ये ट्रेक्ट समयोपयोगी भरल और प्रभावर हैं। शास्त्रिपरिपट्ट का यह साहित्यविकास प्रशंसनीय है”

श्री प० व्याचञ्जी जैन साहित्याचार्य सार

‘जापने भन ट्रेक्ट मिले। सभी ट्रेक्ट अतोव उपयोगी एव सुंदर रचना में पूर्ण है” श्री जयतीर्थो नेहला

“‘जैनदर्शन म मल्लखना’ ट्रेक्ट म नोटिया श्री न सिद्ध किया है कि मल्लखना जात्मवान नहीं यमन शांतिपूर्वक मरण म। ‘मल्लखण वर्म’ म वर्णाभा ने मल्ल मधुर भाषा म जनता को उनके कर्तव्य बतलान का सफल प्रयास किया है। ‘मष्टि कर्ता मण्डन’ म ब्र चाँमलजी न यह बतलान की सफल चेष्टा की है कि परमात्मा निविकार, निरूप पूय एव आदर्श है बि तु विदय का रचना जया उस नष्ट करने वाला नहीं है”

श्री मुस्तानसिद्द जैन M A ग्रामली

“मभा ट्रेक्ट समयोपयोगी होते ह्ये भी सम्प्रदात मुमुक्षुओं को सत्य म दर्शन म सहायक सिद्ध होग।

प मैयाहाट सहोत्र

नियतिवाच

“आपके भेजे हुए ट्रेक्ट मिले इनको पढ़कर आत्मानुभूति ज्योतिर्मय हुई। आपका यह कदम प्रभावना जग का द्योतक है”

श्री पं. बाबूलाल 'करीश' शास्त्री मयिया

“आपका द्वारा प्रेषित ट्रेक्ट समसोपयोगी हैं। मैंने उन्हें अद्यापत पत्रपर निर्णय किया कि ये समाज के ज्ञान विकास में सहायक होंगे”

श्री पं. बाबूलाल जैन ज्ञान-पुर काठ

“श्री शास्त्रिपरिषद् का यह कार्य निःसंदेह धर्म संहति व समाज में नई चेतना लायगा। जैन, जेनेतर समाज व सामने नई शैली में जापन इन पुस्तका द्वारा चिरतन सत्य रखा है”

पं० शर्मनलाल जैन 'सरम' सरार

“आपकी भजी हुई सभी पुस्तकें मिली प्रयास बहुत मुक्त है टपया इस योजना को जारी रग”

श्री जितेंद्र कुमार जैन गौरी

“पुस्तकें पढ़कर यह गौरव के साथ उल्लख किया जा सकता है। कि शास्त्रिपरिषद् जैन समाज की धार्मिक सद्भावना को सुदृढ़ बनाने में जोर जागति के विनाम में महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रहा है”

श्री पं. मगवतीप्रसादजी वर्ग्या लखर

“तीनों ट्रेक्ट मिल, पढ़कर प्रसन्नता हुई। आपका प्रयास श्लाघ्य है। समाज का सौभाग्य है कि परिषद् चहुँमुखी उत्पत्ति करने में अग्रसर है”

पं. मोतीलाल भार्गवण्ट ऋषभदेव

“आपके द्वारा भेजे हुए ट्रेक्ट मिले अधिगारी विद्वानों ने ट्रेक्टों को लिखने में जो श्रम किया है वह अत्यंत प्रशंसनीय है।

नियतिवाद

शास्त्रपरिषद् ने इनको प्रकाशित कर समाज का महान उपकार किया है”

प० धारेलालजी जैन टीकमगढ़

“आपके द्वारा भेजी गई पुस्तके पर्यराज पर सभी ने पढ़ी शास्त्रपरिषद् द्वारा समाज सेवा की सराहना की”

प० धरणेन्द्रकुमार हटा

‘शास्त्रपरिषद् के सभी ट्रेक्ट बहुत उपयोगी हैं। हमारे दि सम्प्रदाय में उच्चकोटि के चरित्र का संरक्षण करना अति आवश्यक है”

श्री प० पद्मनाथ शर्मा जैन शास्त्री हासन (मैसूर)

शुद्धि-सूच



पृष्ठ	पक्ति	दण्ड	शुद्ध
५	००	श	शुद्ध
६	१७	श	शुद्ध
७	फुटनोट	शुद्ध	(ना) नहीं पढ़े
८	८	श	द इ पर पढ़े
९	०१	श	००१
१०	१३	श	००४
१०	१६	श	०१७
११	१०	श	०१८
१२	०	श	-१९
१२	१०	श	(पर) नहीं पढ़े
१०	०३	श	के निषेध के बिना
		श	है) इस बिना
		श	को एकल
१३	४	श	कहा है
१७	१३	श	
१०	०	श	

(२)

पृष्ठ	पक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२०	५	यदि सद्भाव	यदि अनियत पर्याय का सद्भाव
२९	२	और उस दया	और दया
२९	७	एक	प्रथम
३०	३	में बाधा	मे क्या बाधा
३१	२१	का आहार	आहार
३८	२०	जाना है	जाना है यह नहीं
४१	६	तद्वया	तद्व्या
४३	२३	क्योंकि	क्यों कि
४४	२४	अयात्	अर्थात्



